मानव मन्दिर

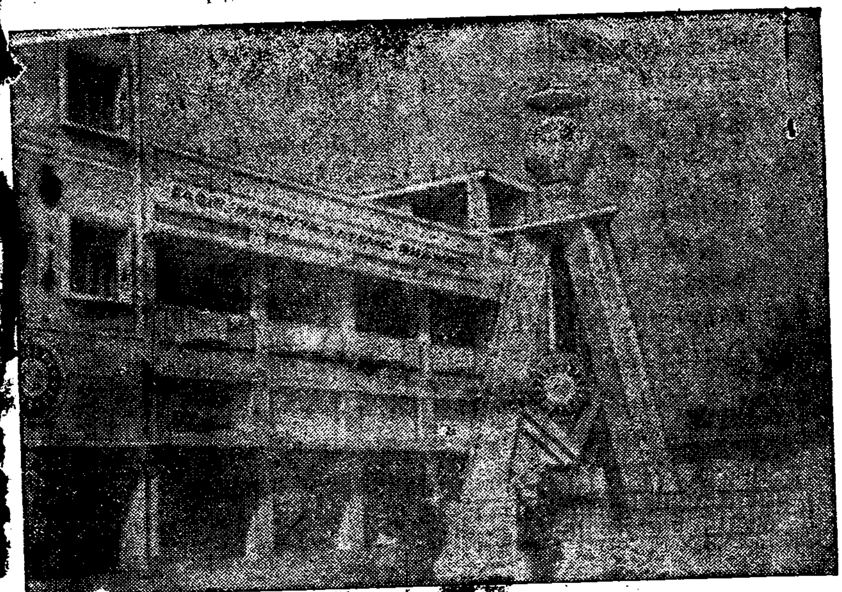

FORM I

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir. Hoshiarpur
Editor's Neme	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir of partners of shareholders, holding more than one Percent of the total capital	Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated : 10-3-86

Signature of Publisher

Printed and Published by: Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press. Manavta Mandir Hoshirapur. for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग
23-3-86 को होगा।

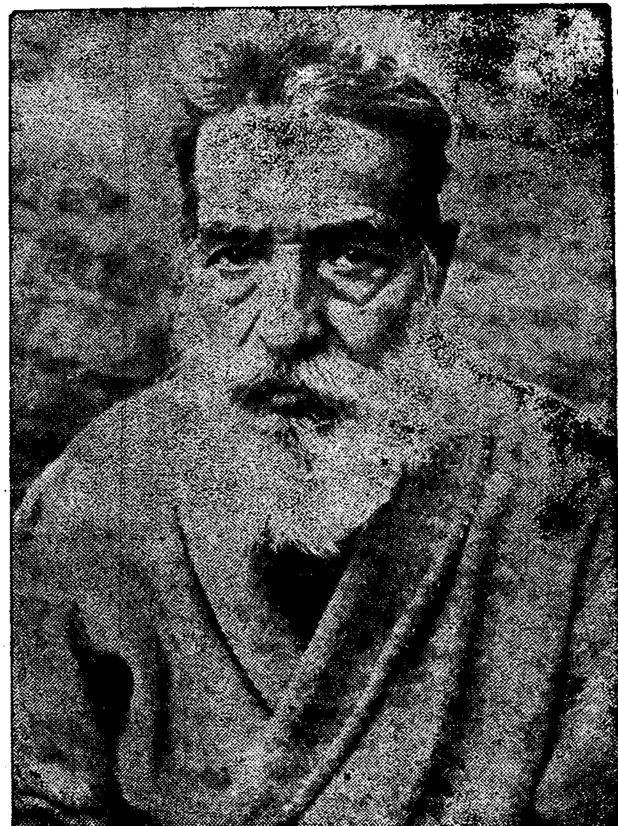

Param Sant Param Dayal Faqir Chand Ji Maharaj

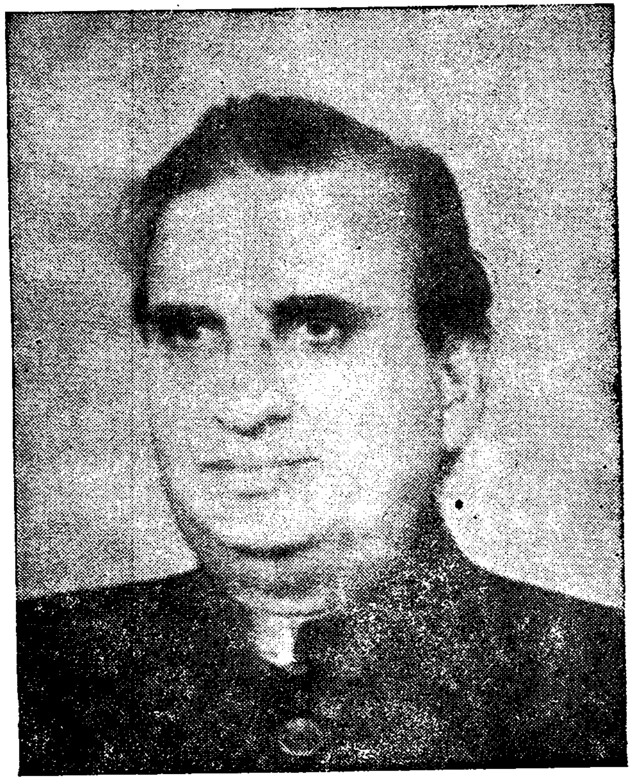

Param Sant Manav Dayal Dr. I. C. Sharma Ji Maharaj

मासिक —

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

BE MAN

मनुष्य बनो

सम्पादक :

डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 12	सोमवार 10 मार्च 1986	संख्या 11

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

सन् १९२७ या २८ की बात है कि एक दिन दोपहर के समय मुन्शी नर्बदा प्रसाद साहिब तहसीलदार, ज्ञानपुर के साथ एक पण्डित जी हजूर दाता दयाल जी महाराज के पास आये। वो जौनपुर के रहने वाले थे। धर्म के बारे में बातचीत शुरू हुई, राजा हरिश्चन्द्र का किस्सा छिड़ गया। मुन्शी गौरीशंकर लाल 'रज़ा' साहिब ने कहा कि विश्वामित्र ने ऋषि होते हुए भी राजा हरिश्चन्द्र के साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया कि जिसकी मिसाल किसी ऋषि की ज़िन्दगी में नहीं मिलती।

पण्डित जी कहने लगे "रज़ा साहिब! इसकी भी ख़ास वज़ह थी। विश्वामित्र को उनसे कोई दुश्मनी नहीं थी। बात यह थी कि विष्णु भगवान् की सभा में बहुत से ऋषि-मुनि मौजूद थे। विश्वामित्र ने यह ज़िक्र छेड़ रखा था कि अब दुनिया में कोई सच्चा, धर्मात्मा और सत्यवादी नहीं रहा। किसी ने उनकी हाँ में हाँ मिला दी और कोई चुप रहा। नारद जी ने वसिष्ठ जी को ख़ामोश देख कर उनको अपना विचार प्रकट करने के लिए कहा। वसिष्ठ जी बोले, इस ज़माने में मेरा शिष्य राजा हरिश्चन्द्र धर्म और सच्चाई के मामले में अपनी मिसाल आप है। मुझे उसके धर्म-परायण होने का अभिमान है। विश्वामित्र वसिष्ठ जी की बात कब

मानने वाले थे। बिगड़ गये और कहने लगे, मैं उसे परेशान करके पतित कर दूंगा। वसिष्ठ जी ने हँसकर कहा, यह आपका भ्रम है। धर्म के मामले में वो हिमालय पर्वत की तरह अटल और मज़बूत है। फिर क्या था विश्वामित्र ने हरिश्चन्द्र को तंग करने के लिए जो कुछ किया वह बच्चा-२ जानता है। राजा हरिश्चन्द्र धर्म के मामले में अटल साबित हुए और गुरु के वचनों को सत्य कर दिखाया। धन्य है वो शिष्य जिस पर गुरु का अभिमान हो और धन्य है वो गुरु जिसका शिष्य इस योग्य हो।"

पण्डित जी की बातें सुन कर लोग बहुत खुश हुए।

मिस्टर सूरज प्रसाद खन्ना (इलाहाबादी) की ज़बान से निकल गया "महाराज ये सब पुरानी कहानियां हैं, इनकी सच्चाई भी बहस-तलब मजमून है। मेरे ख़्याल में तो अब ऐसे शिष्य संसार में शायद ही होंगे जिनकी ज़ात पर गुरु को धर्म के मामले में पूरा भरोसा हो।"

हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने एक ख़ास अन्दाज के साथ फ़रमाया "खन्ना साहिब, इस संसार में सब कुछ मुमकिन है। पण्डित फकीरचन्द मेरा एक सत्संगी है जिसका मुझे अभिमान है। जिस वक्त वह सत्संग में आया मैंने उसे सख़्त से सख़्त इम्तिहान की हालत में रखा और ताक़ीद की कि अगर रूहानी स्कूल में आकर लाभ उठाना चाहते हो तो सिर्फ़ हक़-हलाल की कमाई से सम्बन्ध रखो। बेचारे ने मेरे हुकम की तामील में बहुत तकलीफ़ें उठाईं। तनख्वाह इस क़दर काफी नहीं थी कि आसानी से अपने बाल-बच्चों की परवरिश और भाई की शिक्षा पर खर्च कर सके। वह स्टेशन मास्टर था। मैंने हुकम दिया कि ड्यूटी के अलावा और वक़्तों में मज़दूरी किया करो। उसने अपनी इज़्ज़त की परवाह न करते हुए मेरे हुकम की पूरी-२ तामील की।

जब मैं उसकी हालत सुनता तो मेरी आँखों में खुशी के आँसू आ जाते थे।

"उसने स्टेशन के स्टाफ को सख़्ती से हुकम दे रखा था कि कोई आदमी नाजायज़ रक़म न ले। दुनिया, दुनिया ही है। लोगों ने उसे सताने के लिए उसके विरुद्ध एक झूठा मुक़द्दमा खड़ा कर दिया। फकीर मुसीबतें झेलता हुआ भी खुश था। उसने मुझे तमाम हालात लिखे। मैंने उसे जवाब दिया कि तू फकीर है। दुनिया में बेखौफ़ी तेरी शान है। जब आला अफसर तहक़ीक़ात को आये तो साफ लफ़्ज़ों में कह दो कि इस मुकद्दमे का फैसला शिकायत करने वालों के बयान पर किया जाये। ऐसा ही हुआ। जब रेलवे के बड़े अफसर ने स्टेशन पर आकर फकीर से मुक़द्दमे के बारे पूछा तो फकीर ने कहा कि शिकायत करने वालों ने जो बयान दिया है उसी के आधार पर फैसला किया जाये। अफसर हैरान हो गये कि बावला फकीर क्या कह रहा है। आखिर उन्होंने शिकायत करने वालों के बयान लेने शुरू किये। उस वक्त लोगों ने मालिक की दया का दृश्य खुली आँखों से देखा। सब ने यही बयान किया कि शिकायत बिलकुल निराधार है। पण्डित फकीर चन्द जी बिलकुल बेकसूर हैं। मामला पलट गया और लेने के देने पड़ गये मगर फ़कीर की सिफारिश पर मामला दाखिल-दफ्तर हो गया। उस वक़्त से फ़कीर की मस्ती में बहुत वृद्धि होती गई और रेलवे के महकमे में फ़कीर की धाक बंध गई।"

पिछली जर्मन की लड़ाई के दिनों में रेलवे के अफसरों ने फ़कीर से बग़दाद जाने के बारे पूछा। फ़कीर ने मुझे लिखा। मैंने हुकम दिया कि मालिक की ज़ात पर भरोसा रखकर जहाँ तुम्हारा जी चाहे बेखौफ़ी से चले जाओ। गुरु की दया हमेशा तुम्हारे साथ है। फ़कीर हुकम पाते ही

बग़दाद चला गया। सात-आठ महीने तक कोई खबर न मिली। मुझे तो तसल्ली थी परन्तु घर वाले काफी परेशान थे। बार-२ मेरे पास आये, आखिर मैंने पंजाब गवर्नमेंट को लिखकर तहकीकात करवाई। फ़कीर का पत्र आने पर घर वालों की जान में जान आई। वहाँ फ़कीर के कैम्प के आस-पास दुश्मन की तोप के गोले गिरते थे मगर फ़कीर बिलकुल बेखौफ़ और बेपरवाह था। एक बार वो मुसलमानों के समूह में घिर गया। वे उसे सूफी कहते थे और उसके खाने-पीने और आराम का खास ख़्याल रखते थे और उसकी बहुत इज़्ज़त करते थे। वो फ़कीर की फ़क़ीराना बातों और सलूक को देखकर बहुत खुश होते थे।

फ़कीर की गुरुभक्ति के बेशुमार वाक्यात हैं मगर मैं इस वक्त ज़्यादा गुफ्तगू करना नहीं चाहता। प्रकृति में यह सच्चा फ़कीर और आध्यात्मिक गुरु बनकर आया। वक्त आयेगा जब बेशुमार लोग इस फ़कीर से लाभ उठायेंगे। मैं निहायत जोरदार शब्दों में कहता हूं कि मुझे इस फ़कीर का ख़ास अभिमान है। हजूर दाता दयाल जी महाराज की बात सुनकर सब लोग हैरान हो गये। जिसकी प्रशंसा खुद हजूर महाराज इस क़दर ज़ोरदार शब्दों में फ़रमायें उसके बारे हम लोग क्या ज़बान खोल सकते हैं।

पण्डित जी श्रद्धाभक्ति की ज़िन्दा तसवीर हैं। उनकी इच्छा थी कि वो हजूर को सिंहासन पर बिठाकर उनकी आरती उतारें परन्तु हजूर महाराज बातों-बातों में उनकी प्रार्थना को टाल जाया करते थे। एक बार पण्डित जी ने बहुत प्रेम और श्रद्धा से आरती के बारे प्रार्थना की। हजूर महाराज ने बड़ी मुश्किल से स्वीकृति दी। फिर क्या था पण्डित जी ने आकर नन्दूसिंह साहिब के पास हिदायत भेजी कि सिंहासन गोरखपुर मे बाबू कँवर बहादुर साहिब बर्मन

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

की देखरेख में तैयार हो। ज़रदोज़ी सामान बाबू बृज मोहन सहाय साहिब ने लखनऊ में तैयार करवाया। सब सामान तैयार हो जाने के बाद पण्डित जी छुट्टी पर आये। हज़ूर महाराज जी को शाहाना कपड़े पहनाकर और सजाकर सिंहासन पर विराजमान करके उनकी आरती उतारी। वह एक अनोखा दृश्य था जिसका सम्बन्ध सिर्फ देखने से ही था।

सत्संगी भाइयों को पण्डित जी महाराज का धन्यवाद करना चाहिए कि उन्होंने हर सत्संगी भाई को आरती उतारने का अवसर अपने पास से रुपया खर्च करके बख्शा।

पण्डित जी के बारे में हज़ूर महाराज जी ने एक बार फ़रमाया था "फ़कीर जब लाहौर में आता था तो निहायत अदब के साथ दूर ही से साष्टांग दण्डवत् करता हुआ आता था और पास पहुंचकर मुझे इस तरह प्यार करता था जैसे छोटे और मासूम बच्चे प्यार के अधीन होकर अपने माता-पिता को प्यार करते हैं।"

हज़ूर महाराज ने पण्डित जी महाराज को अपने जीवन में ही अपना उत्तराधिकारी घोषित करना चाहा था परन्तु पण्डित जी साहिब ने अत्यन्त नम्रता के साथ साफ़ शब्दों में अर्ज़ किया "सूरज के होते हुए दीपक की रोशनी से काम लेना उचित नहीं। मैं ऐसी गुस्ताखी नहीं करता।" हज़ूर ने हंसकर फ़रमाया "फ़कीर! कब तक जान चुरायेगा, आज नहीं तो कल यह काम तुझे करना ही पड़ेगा।" पण्डित जी के इन्कार पर बाबू लालता प्रसाद साहिब को धाम पर आचार्य नियुक्त किया परन्तु वो सेहत की खराबी और बीमारी के कारण अपने कर्त्तव्य को पूरा नहीं कर सकते थे। उनकी रोज़-रोज़ की बीमारी और कमज़ोरी को देख कर हज़ूर महाराज ने दिसम्बर १९३८ में पण्डित जी के

नाम एक बहुत लम्बा पत्र लिखा जिसका खुलासा यह था कि मेरे बाद आध्यात्मिक शिक्षा का सिलसिला बन्द न हो। सच्चाई के इच्छुक लोगों के लिए फ़कीर का दरवाज़ा खुला रहे ताकि राधास्वामी मत की सच्ची शिक्षा से कोई खाली न रहे।

हज़ूर महाराज के गुप्त होने के बाद पण्डित जी महाराज ने हज़ूर महाराज की आज्ञानुसार अमल, शुगल और सत्संग का सिलसिला जारी किया। पण्डित जी महाराज बेग़र्ज़, आज़ाद-ख्याल, आमिल और सन्तमत के राज़ से अच्छी प्रकार जानकार हैं। हज़ूर महाराज के दिल में आपकी खास इज़्ज़त है। आप सच्चे मानों में फ़कीर हैं। जिन लोगों ने आपकी भक्ति और अपने आप पर कण्ट्रोल की हालत देखी है वे अश्-अश् कर उठते हैं। मालिक से प्रार्थना है कि वो लोगों की आँखें खोले, उनके दिल में हकीकत की सच्ची प्यास पैदा करे ताकि वो पण्डित जी की ज़ात से फ़ायदा उठा सकें।

एडीटर "सतसंगत"

किसी को किसी की बुराई से क्या लेना है, किसी को किसी की निंदा से क्या लेना है, किसी को किसी की बुराई सोचने से लाभ क्या है ? जिस तरह शहद की मक्खी फूलों से अपने रस को ले लेती है और खुश होती है वही तर्ज़-अमल अख्त्यार करो। तुम खुश रहोगे और तुम्हारे दिल का इलाज शुरू हो जायेगा। मुझे राधास्वामी सत्संग में जो तालीमी सबक़ पहले दिन मिला था वह यही है। शहद की मक्खी बनो गन्दगी की मक्खी न बनो। अगर आदमी यह असूल अख्त्यार कर ले तो अभी से उसका सुधार शुरू हो जायेगा।

—दाता दयाल

सत्संग हजूर परमदयाल
फ़कीरचन्द जी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर
23 - 12 - 1973

सत्यमेव जयते

जब मैं गहरी नींद में चला जाता हूं या साधन के वक्त, प्रकाश, शब्द, ख्याल, विचार सब कुछ भूल जाता हूं। यह हालत कभी-२ आती है। अपनी तलाश के सिलसिले में, चूंकि हिन्दु-कुल में पैदा हुआ, ईश्वर-भक्ति, सच्चाई, नेकी, आदि के संस्कार मिले थे, इन असूलों पर चलता हुआ आ रहा हूं। तबियत सत्यप्रिय है। हर चीज़ को सच्चाई से देखना, कहना, सुनना और सोचने का बचपन से ही एक ख़ब्त था। उमर गुज़र गई। कल रात को मेरे दिल में ख़्याल आया—फकीर चन्द ! तू यह समझता है कि सच बोलना ही सच्चाई है। हम इस दुनिया में रहते हैं। तजुर्बा साबित करता है कि अगर ज़बान से कहने को ही सच-झूठ मान लिया जाये तो एक तरफ तो हमारे यहां यह सिद्धान्त है कि किसी का दिल न दुखाओ। अब अगर सच्ची

बात कह दूं तो हो सकता है किसी का दिल दुखे। तजुर्बा कहता है कि अगर कोई शख्स किसी बेगुनाह इन्सान को बचाने के लिए झूठ बोलता है तो उसमें नुक़सान नहीं। अगर सच बोले तो उसकी जान जाती है इसलिए सच और झूठ के निस्बत जो पहले मैं माना करता था, इससे तबियत उकता गई है। मैं किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सकता था। सभी कहते हैं कि ऐसा सच नहीं बोलना चाहिए जिससे खामुखा किसी का दिल दुखे। फिर रात को ख़्याल आया और मैं सोचता रहा कि इन्सान है क्या?

इन्सान के अन्दर तीन चीज़ें हैं। जिस्म, मन और रूह यानि आत्मा। स्थूल प्रकृति, सूक्ष्म प्रकृति और कारण प्रकृति। इन तीनों से ऊपर तीनों का कोई साक्षी है जो इन तीनों को देखने वाला है जो उन्हें महसूस करता है। सन्त इस चौथी चीज़ को सुरत कहते हैं। मैंने उसको देखने की कोशिश की कि उस साक्षी का रूप क्या है? मेरे तो बाप को भी पता नहीं लगा। वह क्या है? बस वह है। फिर इस संसार में रहते हुए सच्चाई क्या है? सत्, चित् और आनन्द। सत् हमारी जिस्मानी ज़िन्दगी है, चित् हमारे मन के संकल्प हैं, आनन्द हमारी रूह-आत्मा है। तीनों के मुरक्कब हैं हम। तो मैंने प्रण किया था—इस रास्ते पर सच्चाई से चलूंगा। इस रास्ते में मैंने खोज की है। हो सकता है कि मेरी सारी खोज ग़लत हो, इसका मुझे अफसोस नहीं। मेरी नीयत साफ़ है। तो सच्चाई और सत्यता क्या है? इस जिस्म व दुनिया की जाग्रत अवस्था के जीवन में रहते हुए हम देखते हैं कि अगर हम ज़हर खा लें तो मर जायेंगे। यह सच है या नहीं? अगर मैं तुमको गाली दूंगा तो तुम मुझे गाली दोगे। यह सच है या नहीं? तो इस दुनिया में सत्य वस्तु क्या है? जो हम देखते हैं हम

जैसे-जैसे कर्म, या विचार करते हैं, उनका फल हमें अवश्य मिलता है। क्या यह सच नहीं है? तो कर्म करना और उसका फल लेना, इस जाग्रत अवस्था का सत्य है। हमें कर्मों की सज़ा या जज़ा मिलती है। मैं सुना करता था 'सत्यमेव जयते', 'सच बोलो'। तो इस दुनिया में मैंने सत्य क्या समझा? कि भाई, जैसा तू करेगा, वैसा तू भरेगा। यह समझ आई। यह मेरा अनुभव है। अब इसका सबूत! मौजूदा साईंस कहती है कि अगर तुम हाथ हिलाओगे, तो तुम्हारी यह हरक़त ऊपर सितारों तक जायेगी। यह न्यूटन की मौजूदा थ्योरी कहती है। कहती है या नहीं कहती? हमारे ख्याल, विचार और जिस्मानी हरक़त आसमान तक जाते हैं। वहाँ से कुछ वक्त के बाद फल के रूप में लौट कर हमारे पास वापस आते हैं। यह ज़रूरी नहीं कि आज किये हुए कर्म का फल आज ही तुमको मिले। नहीं, उसमें वक्त लगता है। सूर्य की किरणों को यहाँ आने में ७.५ सेकंड लगते हैं। यह सारा संसार किरणों का है। ख़्याल की धारों का है। इससे यह साबित हुआ कि अगर हम किसी का बुरा सोचेंगे तो वो विचार ऊपर जायेगा और वहाँ से लौट कर नीचे आयेगा। यह तो साईंस का सबूत हुआ। दूसरा सबूत गुरु नानक साहिब का है—

'मंदी-कम्मीं नानका, जद कद मंदा होय।'
या
'चंगी-कम्मीं नानका, जद कद चंगा होय।'

दोनों बातें हैं याकि नहीं? गुरु नानक साहिब ने तशरीह कर दी। हमारे शास्त्र कहते हैं:—

'कर्म प्रधान विश्व करि राखा,
जो जस कीन सो तस फल चाखा।'

तो इस दुनिया में जाग्रत अवस्था की सच्चाई यही है

कि जो कुछ तुम करोगे, या विचारोगे, उसका फल तुमको मिलेगा। तो जाग्रत में 'सत्यमेव जयते' यही है। अगर तुम किसी निरपराध को बचाने के लिए झूठ बोलते हो तो तुम्हें कोई पाप नहीं। क्यों? क्योंकि तुम्हारे कर्म की नीयत ठीक है। मेरी बात ग़लत नहीं, मैंने आपको सबूत दे दिया। राधास्वामी दयाल ने भी वाणी में लिखा है—'करम जो-जो करेगा तू, अन्त में भोगना पड़ना।' जितने हवाले थे, मैंने आपको दे दिये। वेदों ने भी यही कहा है—'शिवसंकल्पमस्तु' जब सोचो शुभ सोचो, किसी का बुरा न सोचो। सन्ध्या मन्त्र है, (मैं तो सन्ध्या जानता नहीं) उसका अर्थ है, 'हे भगवान्, जो हमसे दुश्मनी करते हैं, या जिनसे हम दुश्मनी करते हैं, दोनों के भाव को जला दे।' यह ठीक है। महात्मा गाँधी ने भी कहा है – Tolerance। इस सब का मक़सद क्या है? जाग्रत में हमारा कर्म हम अपने मन, वचन और कर्म को सम्हाल कर ठीक रखें। अपने सुख और फायदे के लिए, अपनी नीयत से, किसी को दुःख न दें। किसी का बुरा न सोचें। इसके अन्दर जीवों की हत्या भी आ गई। मांस खाना, शराब पीना, पी कर बदमस्त हो जाना, किसी को गाली देना, दुःख देना सब अशुभ कर्म है। दाता दयाल जी ने अपने शब्दों में यही बात लिखी है। सब का मतलब एक ही है। मेरे मन में ख्याल आया, जो हमेशा 'सत्य-सत्य' कहते रहते हैं कि मैं बड़ा सच्चा हूँ, यह सच्चाई नहीं है। सच्चाई इस दुनिया में जाग्रत अवस्था में हम जो कर्म करते हैं, वह सच्चाई है। अपनी ज़ाती ग़र्ज़ के लिए किसी का नुकसान न करना सत्य है। एक नौजवान लड़का है, ब्याही हुई औरत है, या कोई लड़की है, जिसको वो तंग करता है। वो उसके दिल को दुखाता है। उसके परिवार वालों के दिल को दुखाता है, वह पाप करता है। वह सत्य नहीं है। 'सत्यमेव जयते' का सारा निचोड़ इसके अन्दर आ जाता है। मैंने प्रण किया

था कि इस रास्ते पर चलते हुए जो कुछ अनुभव होगा, वह संसार को बता जाऊँगा। परसों से मेरे दिल में यह विचार आया था कि 'सत्यमेव जयते' क्या है? जो मेरे अनुभव में आया उसकी तसदीक मौजूदा साईंस से, वेदों से, गुरु नानक साहिब के शब्दों से कर दी। अब दाता दयाल के वचन सुनो :—

ऐ मेरे प्यारे भाई, देखो सम्हल के चलना।
खोटे करम न करना, खोटी न बात कहना॥
दुःख दोगे दुःख मिलेगा, सुख दोगे सुख मिलेगा।
मारोगे तुम किसी को, फिर ग़म पड़ेगा सहना॥
कौलो खयाल करतब, दरिया से है मुशाबा।
तुम देखना न इनकी, लहरों पै पड़ के बहना॥
मन इन्द्रियों पै भाई, जब्त रखना तुम बराबर।
जीवित बचे रहोगे, खुशहाल हो के रहना॥
अपनी नशस्त रखना, तुम आसमाँ पै हर दम।
आत्म स्वरूप रहकर, संसार में विचरना॥

अब मैं सोचता हूँ कि चूँकि मेरे ज़िम्मे जगत्-कल्याण की ड्यूटी दी हुई है, मैं संसार को सत्य बता जाऊँ। मुल्क में इस वक्त क्या हो रहा है? घरेलू जीवन में हर व्यक्ति खुदगर्ज है, अपने स्वार्थ के लिए चालें चलता है, दूसरों का दिल दुखाता है, और ४२०, हेराफेरी करता है जिससे दूसरों को तकलीफ और हानि होती है। दुकानदार भाव पै या तोल में चोरी करता है, वह भी मुजरिम है। ये जो हड़तालें हो रही हैं, यह सारे कर्म क्या 'सत्यमेव जयते' हो सकते हैं? नहीं इनका अंजाम हमेशा ग़लत और खराब होगा। लगभग ३० साल हुए, मैंने आवाज़ उठाई थी कि मौजूदा जनतंत्र (डिमोक्रसी) में चुनाव (इलेक्शन) की पद्धति ग़लत और मीठा जहर है। वही जहर अब सब को खा रहा है। इस वक्त

लोको वालों ने हड़ताल की है, जिसकी वजह से मुसाफिरों को कितनी तकलीफ है ? सामान समय से नहीं पहुँच सकते। यह सारा खोटा कर्म इन हड़ताल करने वालों की जान लेगा—लेगा—लेगा, ख़ाह आज ले, कल ले, परसों ले, इस जन्म में ले या अगले जन्म में ले। ये बच नहीं सकते। राजनीतिक पार्टियाँ हैं, एक दूसरे के खिलाफ ज़हर उगलती हैं। ये अपनी-अपनी गद्दियों के लिए द्वेष-नफ़रत के विचार उगलते रहते हैं। इन कर्मों का फल अवश्य बुरा मिलता है। कर्म के फल से किसी का बचाव नहीं। चूंकि मेरे ज़िम्मे दाता दयाल ने ड्यूटी लगाई हुई है जगत्-कल्याण की :—

'तू तो आया नरदेही में, धर फकीर का भेसा।
दु:खी जीव को अंग लगा कर, ले जा गुरु के देसा ॥'

अब मैं सोचता हूँ कि इस ड्यूटी को पूरा करने के लिए क्या करूँ ? फूंक तो मैं मार नहीं सकता न मुझ में यह ताक़त है। लोगों का विश्वास काम करता है। मैं तो खुद हैरान होता हूँ। बाहर जाता हूँ, तरह-तरह के अजूबे लोग अपनी-अपनी सुनाते हैं। मेरा रूप प्रकट होकर लोगों की मदद करता रहता है, दर्शन देता है, लोगों को सिद्धि-शक्तियाँ आ जाती हैं। मुझे तो पता नहीं होता। अब अगर मैं यह साफबयानी नहीं करता, अपनी ज़ाती मान-बड़ाई, इज़्ज़त के लिए सच्चाई को पर्दे में रखूं, तो क्या मैं 'सत्यमेव जयते' का पैरोकार हूँ ? मेरे दिल में एक ख्याल आया हुआ है, मैंने बड़े-२ महात्माओं-गुरुओं के हाल देखे हैं। उन्होंने बड़ी-बड़ी तकलीफें झेली हैं। अब मैं सोचता हूँ कि भगवान् के बड़े-बड़े भक्त, महात्मा जो समाधि लगाते हैं, इनका यह बुरा अंजाम क्यों हुआ ? आखिर मानना पड़ेगा कि यह सब इनके ही कर्मों के फल हैं। तो 'सत्यमेव जयते' यह है कि अपने निजी स्वार्थ के लिए किसी को ठगो नहीं,

धोखा मत दो, फरेब न करो। अपनी नीयत और कर्म को साफ रखो। फिर क्या होगा ? तुम्हारे सत्य कर्म और विचार की वजह से तुमको सुख मिलेगा। गुरु नाम है समझ और विवेक का। गुरु नाम है सच्चाई का। यह काम तो मैं करता हूँ। जो कुछ किसी को मिला, अपने कर्म का फल मिला, चाहे साधु हो, महात्मा हो, पीर हो, पैग़म्बर हो। शुभ-अशुभ कर्मों का फल हर किसी को भोगना पड़ा। दाता दयाल जी का शब्द है :—

'सब भोगें बारम्बार अवश्य फल कर्म किये का।'

राम ने राक्षसों को मारा। मैं उसे बुरा कर्म नहीं कहता। यहाँ एक सर्प निकलता है, वो सैकड़ों लोगों को काट सकता है। अगर उसको कोई मार दे, तो वह पाप नहीं है। ना ! क्यों पाप नहीं है ? क्योंकि उसके मारने से कितने लोगों की जान बच सकती है। लड़ाई के मैदान में बहादुर लड़ते हैं, मगर किसी असूल पर। लाखों स्त्रियों की लाज बचाने के लिए, देश की तबाही को बचाने के लिए। देश-समाज की रक्षा के लिए हमलावर को मारना पाप नहीं है। यह पुण्य है। शास्त्र कहते हैं कि जो शूरमा लड़ाई के मैदान में अपने देश की रक्षा के लिए लड़ता हुआ मर जाता है, वह स्वर्ग को जाता है। पिछले ज़माने की लड़ाई असूलों पर लड़ी जाती थीं। उनमें सिविलियन आबादी और जनता को कोई नुकसान नहीं पहुँचता था। आज बमों की लड़ाई है, यह बुरा है। इनमें बेगुनाह जनता की तबाही होती है। यह कुकर्म है। राम ने राक्षसों को मार कर कोई अशुभ कर्म नहीं किया। मेरी समझ में राम ने जो ग़लत कर्म किया वह यह कि अपने आप को मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाने के लिए एक निर्दोष अबला सीता को, एक धोबी के कहने पर जलावतन कर दिया, जबकि वह गर्भवती थी और जबकि उसकी

पवित्रता की अग्नि परीक्षा ले चुके थे। फिर राम को कोई औचित्य नहीं था सीता को निर्वासित करने का। इस अनुचित कर्म का बुरा परिणाम राम को भोगना पड़ा। भरत, शत्रुघ्न सहित राम, लक्ष्मण और हनुमान को लव-कुश ने अश्वमेध यज्ञ में परास्त किया और हनुमान को रस्सी से जकड़ कर उनके मुकुट उतार लिये और सीता के पास ले गये। सीता को यह देखकर अत्यन्त क्लेश हुआ। तो मैंने आपको बता दिया कि हर किसी को अपने शुभ-अशुभ कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। कृष्ण ने महाभारत कराया और खानाजंगी में यादव कुल का नाश हो गया। कर्म के फल से कोई नहीं बचा। मैं कई बार सोचता हूँ—क्यों फ़कीर चन्द ! यह क्या पाखण्ड जाल बनाया है ? जब कृष्ण की औलाद ने कृष्ण के असूलों पर न चल कर उनकी अपहेलना की और आपस में लड़ मरी तो तू चाहता है लोगों का भला करना ? यहाँ १०-२० आदमी जो रहते हैं, इनका भला तू कैसे कर सकता है ? यह भी तेरा कर्मभोग है। मैं महसूस करता हूँ। पर गुरु की आज्ञा थी, तालीम को बदल जाना। मैंने तालीम को बदल दिया। देखो तो सही ! पाँच पांडव थे, लड़ाई हुई, इनकी बिजय हुई। लेकिन हकूमत किस पर करते ? वंश का तो नाश हो चुका था। दिल में उदासी आ गई। फिर मृत्यु का आलिंगन करने हिमालय में चले गये। बर्फ में गल गये। भागवत कहता है कि चार तो रास्ते में चलते-चलते मरे। द्रौपदी मरी तो अर्जुन ने धर्मराज से पूछा, "यह क्यों मरी ?" युधिष्ठिर बोले, "माता की आज्ञानुसार द्रोपदी हम पाँचों की स्त्री थी, पर अर्जुन को वह अधिक प्यार करती थी जो पाप था इसलिए मरी।" अब मैं सोचता हूँ कि यह कितना गूढ़ विषय है। हमारे चार लड़के हैं, हम एक को ज़्यादा प्यार करते हैं, बाकी को कम।

तो हमारा यह पाप है। तो हमें क्या करना चाहिए ? हमें अपने मन की हरक़त-चाल को ठीक रखना चाहिए। अगर किसी के साथ मेरा अधिक प्यार है, और किसी के साथ कम, तो मैं मुजरिम हूँ। इसलिए मैं कोशिश करता हूँ अपने विचार और कर्म से शुद्ध और सच्चा रहने की। फिर कभी-कभी गिरता रहता हूँ। गिरना इन्सान का खासा है। ऋषियों और सन्तों ने इससे बचने की युक्ति बताई "सुरत-शब्द योग"। सुरत को शब्द से लगाना, कर्म के चक्र से बचने का एक तरीक़ा है। राधास्वामी !

महत्त्वपूर्ण सूचना

जैसा पहले भी सूचित किया जा चुका है, इस वर्ष परमसन्त हजूर परमदयाल पं० फकीर चन्द जी महाराज की जन्म-जयन्ती-शताब्दी बड़े धूम-धाम से मनाई जा रही है। इस सम्बन्ध में बहुत जल्द उनकी जीवनी और शिक्षा पर एक विशाल स्मृति-ग्रन्थ प्रकाशित होने जा रहा है। इस महान् कार्य में आप सब सत्संगी भाई-बहनों के सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है।

यदि आपके पास हजूर परमदयाल जी महाराज की कोई तसवीर (फोटोग्राफ) या विशेष पत्र हैं तो प्रकाशनार्थ जल्द से जल्द मानवता मन्दिर होशियारपुर के पते पर भेज दें। हजूर परमदयाल जी महाराज से सम्बन्धित छोटे लेख भी भेजे जा सकते हैं। यह सभी चीजें ३१ मार्च १९८६ तक अवश्य पहुँच जानी चाहियें, क्योंकि ग्रन्थ अप्रैल माह तक प्रकाशित हो रहा है।

यदि आप इस ग्रन्थ के लिए धन की मदद करना चाहें तो अपनी धन-राशि चेक, ड्राफ्ट या मनी-आर्डर द्वारा परमदयाल सेंटेनरी फंड के नाम मानवता मन्दिर, होशियारपुर के पते पर भेजें। धन-राशि की रसीद आपको भेज दी जावेगी।

जनरल सेक्रेटरी

सत्संग परमसन्त
हजूर मानव दयाल जी महाराज
बम्बई 6-2-85

जब दया गुरु की हुई, चरणों की भक्ति मिल गई।
सब निबलता मिट गई, निश्चय की शक्ति मिल गई ॥
आ गये सतसंग में, और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही, जब गुरु के मत का हो गया ॥
प्रेम का प्याला पिया, पीते ही मतवाला बना।
मन की सुध बुध खो गई, भोला वना भाला बना ॥
पाँव में मस्तक नवाया, चित से धारा गुरु का रंग।
कीट जिसको पहले सब, कहते थे अब ठहरा भिरंग ॥
आप में आपा लखा, आपे में आपा ज्ञान था।
भरम में भटका हुआ, भूला था और अज्ञान था ॥
शब्द के सुनते ही अन्तर में, जो विरती सो गई।
छिन पल में वासना, माया की सारी खो गई ॥
राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी राग को।
गा रहा हूँ धन्य मैं, कहता हूँ अपने भाग को ॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः, गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
मानवधर्मस्य धातारं, दाता दयालस्य प्रियतमम्।
सत्यधर्मस्य गोप्तारं, फकीरं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

राधास्वामी !

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप भाइयो और बहनो, आज इस सत्संग के सिलसिले में यहाँ पर यह तीसरा और इस दौरे का आखिरी सत्संग है। इस सत्संग के लिए जो शब्द पढ़ा गया है उसमें एक श्रद्धा और एकाग्रता की बात है और दूसरा उसमें यह कहा गया है कि गुरु जब ज्ञान देता है, जब आपको रास्ता दिखाता है, मार्ग-दर्शन कराता है, तब उसमें आखिरी मंज़िल ऐसी होती है कि आप स्वयं गुरु हो जाते हो। ये दो बातें आती हैं। इसके पहले कि मैं श्रद्धा और विश्वास के बारे में बताऊं, पहले जो मंगलाचरण मैंने किया है उसकी व्याख्या करना चाहता हूँ। मैंने शुरू में आपको "राधास्वामी" सम्बोधन करके कहा है। राधास्वामी किसी फिरके या किसी मनुष्य का नाम नहीं है। अक्सर लोग मिलते हैं तो एक-दूसरे को राधास्वामी करते हैं, जैसे नमस्कार करते हैं। पर राधास्वामी किसी व्यक्ति को नमस्कार नहीं है। स्वागत तो इसमें है, पर किसका? व्यक्ति का नहीं। राधास्वामी में दो शब्द 'राधा' और 'स्वामी' हैं। ये दोनों ध्वन्यात्मक शब्द हैं। शब्द जो हम बोलते, पढ़ते, लिखते या स्वाध्याय करते हैं ये ध्वन्यात्मक शब्द हैं। स्वाध्याय का भी बड़ा महत्त्व है। स्वाध्याय किसी महान् लेखक, दार्शनिक या सन्त का भी हो सकता है। लोग तो जब किसी विख्यात नेता, मन्त्री, गवर्नर या प्रेसिडेण्ट से मिलते हैं तो गर्व महसूस करते हैं, कहते हैं मैं अमुक राजपुरुष से मिला, उसने मेरे साथ आधा घण्टा बात की। लेकिन यदि कोई मनुष्य भगवद्गीता का स्वाध्याय करे तो उसे यह गर्व महसूस करना चाहिए कि मैंने दो घण्टे भगवान् कृष्ण से बातें कीं। अगर आप विश्वविख्यात विद्वान् प्लेटो की पुस्तक लगातार तीन चार घण्टे पढ़ें तो

महसूस होगा कि आपने प्लेटो से बातें कीं। किसी राजपुरुष या नेता से मिलना इतना महत्त्वपूर्ण नहीं, जितना एक सन्त की पुस्तक या किसी अवतारी पुरुष की पुस्तक का पढ़ना है। इस स्वाध्याय का बड़ा महत्त्व होता है सांसारिक बुद्धि की दृष्टि से भी और आध्यात्मिक दृष्टि से भी। राजयोग मालिक को मिलने का तरीक़ा है। धर्म क्या है? लोग धर्म के मार्ग पर क्यों चलना चाहते हैं? यह जानने के लिए कि हम कौन हैं? कहाँ से आये हैं? और हमें कहाँ जाना है? हमारी मंज़िल का रास्ता कौनसा है? आप कभी इन सवालों पर गौर नहीं करते, ध्यान नहीं देते तो आपका जीवन सुखमय कैसे हो सकता है? आप कहोगे कि ये प्रश्न बड़े अजीब हैं लेकिन ये मनुष्य जीवन के सबसे प्रमुख और महत्त्वपूर्ण सवाल हैं। एक व्यक्ति एक हनुमान के मन्दिर में गया और दो सौ रुपये का प्रसाद चढ़ा कर खुशी से सबको बाँटने लगा। लोगों ने पूछा, "भाई कौनसी ऐसी खुशी की बात है?" उसने उत्तर दिया, "कल रात को चोर मेरा घोड़ा चुरा ले गये, पर खुशी की बात यह है कि मैं उस घोड़े पर सवार नहीं था।" लोग उसके उत्तर पर हँस पड़े। पर बात उसने बहुत सच और गूढ़ कही थी। अक्सर लोग इस झूठे अहंकार में भूले रहते हैं कि मैं अमुक अफसर हूँ, इतना धनवान हूँ, शिक्षित हूँ, अमुक खानदान का हूँ, बड़ी कोठी और मोटरकार वाला हूँ, वग़ैरा-वग़ैरा। पर यह सब आपका घोड़ा है। आप खुद तो इस घोड़े के सवार हो। लोग घोड़े के पीछे पड़े रहते हैं और सवार की खबर नहीं। और यही मनुष्य के दुःख का कारण है कि हम यह नहीं जानते कि हम कौन हैं? इन्सान घोड़े की बात करता रहता है कि उसका घोड़ा सुन्दर है, मेरा सुन्दर नहीं है। घोड़े के ख़्वाब देखने में ही उमर खतम हो जाती है और अपना (सवार का)

पता नहीं चलता। कहा जाता है कि लोग साये के पीछे बेतहाशा भाग रहे हैं और जो ठोस सार-वस्तु है, उसको नहीं देखते। जब तक इस सार तत्त्व को पाने की लगन नहीं होती, जब तक आधार को मिलने की तड़प नहीं होती, आपके जीवन में शान्ति नहीं आ सकती। जब तक उस परमतत्त्व या राम के मिलने की चाह नहीं पैदा होती, उस चाह को पूरा करने का साधन नहीं होता, और जब तक उस परमतत्त्व राम से सम्पर्क नहीं होता तब तक आप चाहे जितने पैसे, जायदाद, विद्या, पदवी, सम्मान-शोहरत वाले क्यों न हों, आपको सच्ची शान्ति नहीं मिलेगी। गो सनातन धर्म या सन्तों ने भी अर्थ को ज़रूरी कहा है लेकिन उसे साध्य न मान कर साधन मात्र माना है। अमेरिका का महान् धनाढ्य व्यक्ति हार्वर्ड ह्यू जो अपने पैसे को गिन नहीं सकता था, आत्महत्या करके मर गया। भारत का धन-कुबेर राजा बिरला जो बड़ा दानी था, जिसे अपनी सम्पत्ति की थाह का पता न था, लंदन में चलते हुए उसका देहान्त हो गया। अगर धन या पैसे से मालिक मिलता होता तो पैसे वाले मालिक को खरीद लेते और ग़रीबों को मालिक के दर्शन तक मुहाल हो जाते।

धनकुबेरों की अशान्ति और आत्महत्या इस बात का प्रमाण हैं कि सारी सम्पत्ति के होने के बावजूद भी मनुष्य के अन्दर एक कुरेद मौजूद रहती है। जब तक वह कुरेद नहीं मिटती तब तक मनुष्य की आत्मा को शान्ति और चैन नहीं मिलती। क्या है वह कुरेद ? वह कुरेद है मालिक की, स्वामी से मिलने का। वह परमतत्त्व, परमात्मा, अविनाशी तत्त्व स्वामी है और जीव (आत्मा) राधा है। अविनाशी स्वामी परमतत्त्व का अथाह, अनन्त सिन्धु है जिसकी एक बिन्दु मात्र से सारे सूर्य, चन्द्र, सितारे, आकाश-गंगाएँ और

अनन्त ब्रह्माण्ड की रचना होती रहती है। यह बिन्दु भी इतनी प्रभावशाली और पूर्ण है, अक्षर है जितना कि वह परमतत्त्व का सिन्धु। सिन्धु और बिन्दु अभेद और एक हैं। आप को ज्ञान नहीं है, आप उसी पूर्ण परमतत्त्व के पुत्र हो और पूर्ण हो। अरे आप शेर हो पर अपने शेरपने को भूल बैठे हो। वेदों के ऋषि कहते हैं कि आप अमृत-पुत्र हो। पर इसका सबूत आप के पास क्या है? इसका सबूत यह है कि अगर आप अन्तर्मुखी हो कर अपने अन्दर झाँक कर देखो तो आपको यह बोध हो जायेगा कि आप ख़ाक के पुतले नहीं हो बल्कि आप स्वयं पूर्ण हो :—

> 'पहचान ले अपने को, तो इन्सान ख़ुदा है;
> ज़ाहिर में गो है ख़ाक, मगर ख़ाक नहीं है।
> जलवों की ख़ता क्या, जो दिखाई नहीं देते;
> ख़ुद देखने वालों की, नज़र पाक नहीं है।'

यह दाता दयाल महाराज का कलाम है। वे फरमाते हैं कि आप अगर अपने अन्दर प्रवेश करके देखिये तो पता लग जायेगा कि यह ख़ाकी शरीर मन की शक्ति पर आधारित है। मन अत्यन्त शक्तिशाली है। यह आपको ऊपर भी उठा सकता है और नीचे भी गिरा सकता है। मन महा-चंचल है पर मन अपनी शक्ति आत्मा से प्राप्त करता है जो राधा है। आत्मा की धारा स्वामी से निकली है। स्वामी आधार है और आत्मा उसकी धारा है। जब वह धारा अपने स्वामी की तरफ को चलती है तब उलट कर राधा हो जाती है। यह शरीर और सारा स्थूल जगत् राधा है और स्वामी इसका आधार है। चाहे इसे सीता-राम कह लो चाहे गौरी-शंकर कह लो या राधास्वामी कह लो बात एक ही है। यह सारा जगत् जो राधा है, बहुत सुन्दर है। इससे नफ़रत नहीं करना है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अत्यन्त सुन्दर

और सुखद है। यह राधा है स्वामी की। सनातन धर्म या बेद-उपनिषद् या सन्तमत यह नहीं कहता कि संसार से नफ़रत करो। नाहीं भगवद्गीता हमें विराग की शिक्षा देती है। लोग ग़लत समझते हैं कि गीता पढ़ने से मनुष्य वैरागी हो जाता है बल्कि गीता हमें कर्मयोग की ऊंची से ऊंची शिक्षा देती है। कुरुक्षेत्र में जब अर्जुन घबरा कर अपने क्षत्रिय-धर्म से विमुख हो रहा था और युद्ध करने से इन्कार कर रहा था तो भगवान् कृष्ण ने बड़ी युक्ति से कर्म-योग की शिक्षा और ज्ञान देकर उसे सत्य के रास्ते पर लगाया क्योंकि अर्जुन अन्दर से भक्त था और भगवान् को सद्गुरु मानता था। उसने पहले भी बहुत सी लड़ाईयाँ लड़ी थीं और विजय किये थे, पर पहले कभी इस प्रकार के कमज़ोरी के प्रश्न नहीं उठाये थे। यह कमज़ोरी या बेचैनी कब होती है? जब हमें निश्चय नहीं हो पाता और यह पता नहीं होता कि हम कौन हैं? क्या हैं? और किधर जा रहे हैं? जब अर्जुन कृष्ण के महल में गया और भगवान् सो रहे थे, दुर्योधन पहले से ही मौजूद था और भगवान् के सिरहानें बैठा था। अर्जुन चरणों की तरफ बैठ गया। जब कृष्ण उठे तो अर्जुन से कहा, "अर्जुन, तुम आ गये!" दुर्योधन बोला, "महाराज मैं पहले आया हूँ।" कृष्ण बोले, "मैं समझ गया कि भारत का सर्वनाश होकर रहेगा क्योंकि तुम दोनों मेरे सम्बन्धी हो। मेरे पास से कोई निराश नहीं लौट सकता। सन्त किसी को बुरा या अच्छा नहीं समझते। सब पर समभाव और प्रेम का व्यवहार करते हैं।" भगवान् कृष्ण ने कहा, "एक तरफ तो मेरी सारी सेना, सम्पदा और साम्राज्य है और दूसरी तरफ मैं अकेला हूँ और हथियार भी नहीं उठाऊंगा। अर्जुन, तुम पहले आये हो इसलिए पहले तुम चुन लो।" दुर्योधन बोला, "महाराज पहले मैं आया हूँ,

मैं चुनूंगा।" अर्जुन बीच में बोल पड़ा, "भगवन् मैं तो आप ही को चाहता हूँ।" दुर्योधन बोला, "ठीक है, ठीक है, तू अपने भगवान् को ले ले, मुझे तो उनकी सेना और खज़ाना चाहिए।

अर्जुन ने तो कृष्ण को गुरु माना था लेकिन युद्धभूमि में भूल गया और उन्हें अपना मित्र और सारथी समझ लेने की भूल की। इसी कारण वह घबरा उठा और विवेक-बुद्धि सब खो बैठा। इस घबराहट और विवेकहीनता में उसने दो ग़लतियाँ कीं। एक तो उसने कहा कि हे मित्र, मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा करो, मैं देखना चाहता हूँ कि मेरे साथ कौन लोग युद्ध करने आये हैं। दूसरे उसने वेद की निन्दा की और कहा कि युद्ध के कारण स्त्रियाँ विधवा होकर दुष्टा हो जाती हैं और वर्णसंकर सन्तान पैदा होती है, पितर नरक में जाते हैं। वह भूल गया कि कृष्ण सन्त सद्‌गुरु वक्त हैं और उनको शरीर समझ बैठा। कृष्ण ने रथ को एक दम ले जा कर भीष्म पितामह और आचार्य द्रोण के सामने खड़ा कर दिया। अर्जुन देखते ही भयभीत हो गया कि उसकी जीत नहीं हो सकती। सफलता या विजय हमेशा गुरु की आज्ञा पर चलने से होती है। कृष्ण की आज्ञा का पालन कर अर्जुन ने गुरु द्रोण और भीष्म पितामह को प्रणाम किया। गुरु हमेशा निश्चय की शक्ति देता है। उसका आशीर्वाद ही निश्चय की शक्ति है यह बात पहले नहीं, बाद में समझ में आती है।

मैं भी अपने सद्‌गुरु परमदयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन करता हूँ। जो बात सच्चे दिल से निकल जाती है वह होकर रहती है, कोई माने ना माने। एक दृष्टि से सारी गीता का सारांश गुरु-आज्ञा का पालन करना है। गुरु कौन है? गुरु वह है जो सब से बड़ा है। उमर से

नहीं, अनुभव और ज्ञान से जो सबसे बड़ा है वह गुरु है। गुरु आपको सच्चा रास्ता बताता है। सिद्धपुरुष, आचार्य, गुरु और सन्त मालिक को अपने हृदय में, अपने घट में देखते हैं। आप कौन हैं? इसका जवाब आपको बाहर नहीं, अन्तर्मुखी होकर मिलेगा। किन्तु कोई भी क्यों न हो, अपने अन्दर घट में विराजमान ईश्वर को तब तक नहीं देख सकता जब तक उसमें श्रद्धा और विश्वास न हो। गोस्वामी तुलसी दास ने कहा है :—

"भवानी श्रद्धा हैं, और शंकर विश्वास हैं।" श्रद्धा और विश्वास के बिना आप कभी भी अपनी असलियत और अपने आपे को नहीं जान सकते। श्रद्धा का मतलब है अपने इष्ट के प्रति ऊँचा से ऊँचा प्रेम रखना। यह प्रेम एक धारा है जो आपकी आत्मा से निकल कर प्रवाहित हो रहा है, जो अनन्त है। जिसके हृदय में प्रेम है उसे किसी के प्रति ईर्ष्या हो नहीं सकती। प्रेम असीम है। जैसे नदी की धारा आगे से आगे बहती चलती है और रास्ते में अनेक जलाशयों को बनाती-भरती चली जाती है। आप बच्चे थे तो माँ के प्रति प्रेम हुआ इस प्रेम को श्रद्धा कहते हैं जो छोटे का बड़े के प्रति प्रेम होता है। भाई, बहन या मित्र के प्रति समानता और बराबरी का प्रेम होता है। इसे स्नेह कहते हैं। जो प्रेम बड़े का छोटे के प्रति होता है उसे वात्सल्य कहते हैं। माता-पिता का बच्चे के प्रति प्रेम वात्सल्य है।

प्रेम में मिलाने और एक करने की शक्ति है जब कि ईर्ष्या अलग करती है। जब मैं अमेरिका में पढ़ाता था तो मालिक की दया से मुझे व्यवसाय भी वही मिला था जो जीवन का उद्देश्य भी है। मेरे पढ़ाने का विषय होता था कि हम कौन हैं? कहाँ से आये हैं? कहाँ जाना है? परमतत्त्व क्या है? उससे मिलने का रास्ता और साधन क्या है?

समाधि क्या है? आदि विषयों को मैं अमरीकी छात्र-छात्राओं को पढ़ाता था। वेद, उपनिषद्, भगवद्गीता, इस्लाम, ईसाई, यहूदी आदि संसार के सभी धर्म पढ़ाता था। महाराज जी ने मुझ पर कृपा की। लोग कहते हैं, हमें समय नहीं मिलता, हम साधना-ध्यान कैसे करें? अरे सच बात तो यह है कि मालिक का ध्यान-साधन नहीं करते इसीलिए समय नहीं मिलता। अगर आप समय से साधना करें तो आपका मन स्थिर हो जायेगा, आपके काम भी जल्दी हो जायेंगे। चूंकि आपको समय नहीं मिलता इसलिए साधना नहीं करते, चूंकि आप साधना नहीं करते, इसलिए आपको समय नहीं मिलता। लेकिन मालिक की दया से मुझे व्यवसाय ऐसा मिला जो मेरे जीवन का लक्ष्य था। बेचारे इंजीनियर या डाक्टर को कहाँ फुरसत कि बैठकर इन विषयों पर सोच-विचार करें? मैंने अमेरिका में ३० हजार छात्र-छात्राओं को पढ़ाया और भारत में भी इतने ही छात्र-छात्राओं को पढ़ाया। पढ़ाई समाप्त होने पर अमेरिकन छात्र-छात्राएँ मेरे पास आते और कहते, "डा० शर्मा, आपने तो हमारी जिन्दगी ही बदल दी।" मैं उनसे पूछता था कि मैंने तो आपको तीन तरह का प्रेम बता दिया— छोटे का बड़े के प्रति श्रद्धा, बड़े का छोटे के प्रति वात्सल्य और भाई-बहन-मित्र का पारस्परिक प्रेम स्नेह कहलाता है। पर तुम्हारे यहाँ तो केवल एक ही शब्द 'Love' है सब के लिए। "I love my father ; I love my wife ; I love my dog." फिर मैं उन्हें बताता कि एक चौथे प्रकार का प्रम भी है। आजकल तो यदि भारतीय लड़कियों से भी यह सवाल किया जाये कि पति-पत्नी का प्रेम कैसा होना चाहिए तो वे भी अमेरिकन लड़कियों की तरह कहेंगी "बराबरी का होना चाहिए, हम पीछे क्यों रहें?" पर हमारे ऋषियों ने यह फैसला पहले ही कर दिया है कि यह चौथे

प्रकार का प्रेम "दाम्पत्य रति" है। यह उन तीनों प्रेमों का समन्वय (मजमूआ) है। इस बात को यदि समझ लिया जाये तो अमेरिका में जो चार में से तीन के तलाक होते हैं और भारत में अब सौ में से एक होने लगा है, शायद यह होने की नौबत न हो। पति-पत्नी का प्रेम है क्या ? वह प्रेम के तीनों रूपों का समन्वय, ऐक्य, मजमूआ है। मैंने बताया कि प्रेम तो आत्मा से निकलता है और अनेक प्रकार के आदर्श नमूने बनाता चला जाता है, जो एक दूसरे से टकराते नहीं, बल्कि एक-दूसरे के पूरक और अलंकार होते हैं। एक-दूसरे की शोभा और सहायक होते हैं। दाम्पत्य रति में स्नेह, श्रद्धा और वात्सल्य तीनों का संगम होता है। यह पति-पत्नी दोनों की तरफ से होता है। मैं एक दिन महाराज जी के सामने भाग से ऊँचा बोला तो महाराज जी ने तुरत मुझे टोका "तू पत्नी से ऊँचा बोलता है ? मैं तो डरता था।" अमेरिका-इंगलैंड में इसकी विचित्र मिसालें हैं। छोटी-छोटी बातों पर वहाँ तलाक़ हो जाती है। अगर पति ने ग़लती से पत्नी का ब्रश इस्तेमाल कर लिया तो तलाक़ हो गई। एक बार इंगलेंड के बड़े-२ मिनिस्टरों, सांसदों और विद्वानों ने अपनी पत्नियों के जुल्म से क्षुब्ध और दुःखी होकर अपने अधिकारों की रक्षा करने के लिए किसी ऊँची इमारत के ऊपरी हाल में सभा की। लगभग दस हज़ार पुरुष एकत्र हुए। सभा के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और मन्त्री की पत्नियों को इस मीटिंग की सूचना मिल गई तो उन्होंने तुरत उनके विरोध में स्त्रियों का एक जलूस निकाला और सभा भवन पर पहुंचीं। अभी जलूस उस गली में ही पहुँचा था कि डर के मारे आधे से अधिक सभासद मीटिंग छोड़ कर निकल भागे। पाँच हज़ार से कम व्यक्ति हाल में रह गये। जलूस जब अन्दर घुसा तो सब भाग गये केवल प्रेसिडेण्ट, वाइस

प्रेसिडेण्ट और सेक्रेटरी ही रह गये। स्त्रियाँ जब हाल में पहुँचीं तो सब भाग गये, केवल प्रेसिडेण्ट रह गया। स्त्रियों ने कहा—यह बड़ा हिम्मत वाला है। जब उसके पास गईं तो मालूम हुआ कि उसका हार्ट फेल हो चुका था। भारत में इसके विपरीत अवस्था है। हमारे यहाँ दाम्पत्य रति का आदर्श है जिसमें सबसे पहले श्रद्धा है, इसके साथ स्नेह और वात्सल्य का समन्वय है। जब पति बीमार होता है तो पत्नी माँ का काम करती है और समय पर मित्र और मन्त्री का कर्त्तव्य भी निभाती है। पर यह दोनों तरफ से होना चाहिए। फिर घर में कभी कलह या वैमनस्य हो ही नहीं सकता।

दाम्पत्य रति से भी बढ़कर और ऊँचा है मालिक (परमेश्वर) के प्रति प्रेम। मालिक से कोई भी नाता मान लो, पिता मान लो, पुत्र मान लो, गुरु मान लो। कुछ न मान सको तो शत्रु मान लो तब भी उद्धार हो जायेगा। बालि और रावण का उद्धार हुआ या नहीं? उन्होंने मालिक को शत्रु मान कर भजा और मोक्ष प्राप्त हो गया। दशरथ-कौशल्या और नन्द-यशोदा ने पुत्र माना और उनका उद्धार हुआ। मालिक का प्रेम निःस्वार्थ और आत्मिक होता है, वह भौतिक प्रेम नहीं होता। लोग इस भेद को समझते नहीं। सोलह हजार गोपियों ने कृष्ण से प्रेम किया और हर एक गोपी के साथ एक कृष्ण रास रचाते थे। गुरु या मालिक के प्रति प्रेम में इतनी उत्कृष्ट अलौकिक शक्ति है जो आपके और सभी सम्बन्धों को भी शक्ति प्रदान करती है।

"राम चरित मानस" में गोस्वामी तुलसीदास जी ने भवानी-शंकर को श्रद्धा और विश्वास का रूप कहा है। लोग इसके अर्थ को नहीं समझते। शंकर ने रामायण का जो अनुभव किया उसे अपने हृदय में रख लिया। उस मन

में रखे हुए रामायण को श्रद्धा रूप भवानी के कहने पर व्यक्त किया। तुलसीदास जी कहते हैं :—

'एक बार त्रेता युग माहीं।
शम्भु गवे कुम्भज ऋषि पाहीं॥

त्रेता में उमा और शंकर मौजूद थे जब सीता को रावण हर ले गया था। राम-लक्ष्मण वन में सीता को खोज रहे थे संन्यासी के वेष में। भगवान् शंकर ने उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया। तब उमा बोलीं, "महाराज, आप ने इन तपस्वियों को नमस्कार किया जो राजा दशरथ के पुत्र हैं? आप तो त्रिलोकी नाथ हो!" शंकर ने उत्तर दिया, "भवानी, ये राजकुमार नहीं हैं। ये पूर्ण परमतत्त्व हैं जिनका मैं निरन्तर ध्यान करता रहता हूँ पर तुम्हारी श्रद्धा में कुछ कमी आ गई है। यदि तुम्हें विश्वास नहीं तो परीक्षा करके देख लो।" भवानी ने तत्काल राम की परीक्षा लेने के लिए सीता का रूप धारण कर लिया और राम के सामने पहुँचीं। राम ने उन्हें देखते ही नमस्कार किया और बोले, "भवानी, शंकर के बिना आप यहाँ अकेले कैसे?" भवानी सुनते ही घबराईं और अपनी भूल को महसूस किया। भवानी लज्जावश छिपने के लिए नाना ब्रह्माण्डों में गईं और सभी ब्रह्माण्डों में अलग-अलग ब्रह्मा-विष्णु देखे किन्तु राम हर जगह एक ही दिखाई दिये। अन्त में वह भागी शंकर के पास पहुँचीं। शंकर ने कहा "भवानी, ले ली राम की परीक्षा?" भवानी ने झूठ बोला, "महाराज मैंने परीक्षा नहीं ली, आपकी ही भाँति दण्ड-प्रणाम करके लौट आई।" गोस्वामी जी लिखते हैं :—

यद्यपि सत्य न कहेउ भवानी।
शिव अन्तर्यामी सब जानी॥'

शंकर को ध्यान से यह पता चल गया कि भवानी ने

मेरे इष्ट "राम" की शक्ति 'सीता' का वेष धारण किया था तो मन में प्रण कर लिया कि भवानी के साथ अब अर्द्धांगिनी का व्यवहार नहीं रह सकता। तभी आकाशवाणी हुई, "शंकर, तुम धन्य हो और धन्य है तुम्हारा विश्वास रूप।" उसी समय भवानी के पिता को प्रजापति की पदवी प्राप्त हुई और वह यज्ञ कर रहे थे। भवानी ने शंकर से पिता के घर जाने की अनुमति माँगी। शंकर ने कहा, "बिन बुलाये किसी के घर नहीं जाना चाहिए पर तुम्हारा हठ है तो जाओ", यह कह कर शंकर अखंड समाधि में लीन हो गये। जब भवानी अपने पिता के घर पहुँचीं तो देखा कि यज्ञ में सभी देवता बुलाये गये हैं पर शंकर को नहीं बुलाया गया है। पति का अपमान उन्हें असह्य हो गया और पिता पर कुपित होकर अपने आपको योगाग्नि में भस्म कर दिया और फिर हिमालय के घर गौरी का जन्म लिया। गौरी जब विवाह के योग्य हुई उस समय नारद उधर आ निकले। माता ने उनका स्वागत-सत्कार किया और आग्रह से पूछा, "भगवन्, मेरी पुत्री की हस्त-रेखा देखिये।" नारद ने गौरी का हाथ देखकर कहा, "कन्या बड़ी भाग्यवती है किन्तु इसका विवाह ऐसे पुरुष से होना लिखा है जो बेघरबार का, श्मशानों में रहने वाला, चर्म लपेटने वाला होगा।" यह सुनकर माता मैना घबरा उठी और नारद के चरणों में गिर कर प्रार्थना की, "महाराज, मेरी कन्या के कल्याण का कोई उपाय आप करो।" नारद बोले, "चिंता की बात नहीं है। ये सारे लक्षण भगवान् शंकर में हैं। इस कन्या का विवाह शंकर से हो जाये तो कल्याण ही कल्याण है।" गौरी ने नारद को अपना गुरु मान लिया और मन में प्रण ठान लिया कि गुरु-आज्ञानुसार मैं शंकर से ही विवाह करूंगी अन्यथा क्वांरी ही रहूँगी। गौरी ने शंकर को पाने के लिए

घनघोर तपस्या की, व्रत किये। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि-देवता-देवियाँ गौरी के दर्शन के लिए आते और नमस्कार करके चले जाते। गुरुता उमर में नहीं, तप में होती है। सभी देवी-देवताओं ने जाकर भगवान् शंकर से विनय किया कि महाराज जब तक आप गौरी से विवाह नहीं करोगे, कुमार का जन्म नहीं होगा और हम युद्ध में असुरों द्वारा त्रस्त होते रहेंगे :—

सुर नर मुनि सब की यह रीती।
स्वारथ लागि करैं सब प्रीती ।।'

भोले शंकर बोले, "पहले मैं गौरी की परीक्षा लूंगा।" एक तरुण ब्रह्मचारी के वेष में गौरी की परीक्षा लेने पहुँच गये। बोले, "राजकुमारी तू अति सुन्दरी, सुशीला, कोमल है, तुझसे कोई पाप भी हुआ सम्भव नहीं है, फिर तू इतनी घनघोर तपस्या क्यों कर रही है? तू तो अनमोल रत्न है। रत्न किसी को खोजने नहीं आता, लोग ही रत्न की खोज करते हैं।" गौरी ने एक सहेली को उत्तर देने का संकेत किया। सहेली ने उत्तर दिया, "महाराज, ये शंकर को पति रूप में पाने के लिए घोर तप कर रही हैं।" ब्रह्मचारी बोला, "यह तो महामूर्खता होगी। कहाँ राख-विभूति मलने वाला, श्मशानबासी, जटाजूटधारी, भूत-वैतालनाथ शंकर और कहाँ यह सुन्दर सुकुमार शरीर, राजसी वस्त्र-आभूषणों से अलंकृत राजकुमारी! यह तो घोर अनर्थ हो रहा है। अरे, हम विष्णु जैसे सुन्दर ऐश्वर्यवान् त्रिलोकपति से तुम्हारा विवाह करवायेंगे। गौरी बोली, "जन्म-जन्म की रगड़ हमारी, महाराज, आप देर से आये। पहले आते तो सम्भव था मैं आपकी बात मान लेती पर अब तो मैं शंकर को ही वरण कर चुकी हूँ।" ब्रह्मचारी ने शंकर की बहुत कुछ निन्दा की और कहा, " शंकर तो फक्कड़-फकीर है। उसके

पास क्या है ?" गोरी को क्रोध आया, पर पहले समझाने की चेष्टा की।

"फकीर कौन है ? फकीर साक्षात् परमतत्त्व का अवतार है। उसे कोई कमी नहीं, उसे अपने लिए कुछ भी नहीं चाहिए। फकीर साक्षात् शंकर हैं।" दाता दयाल महाराज ने फकीर की परिभाषा की है :—

'कौन है शादाँ यहाँ, शादाँ फ़कत ज़ाते फ़कीर।
खुश नहीं हरगिज़ तवंगर मालोज़र वाले अमीर ॥'

खुश यहाँ कौन है ? घोड़ा या कि सवार ? लोग समझते हैं कि धन-दौलत, ज़र-ज़मीन, विवाह-शादी पुत्र-पौत्र हो जाये यही खुशी है लेकिन यह सब आपका घोड़ा है, सवार तो आप हो। अगर आपको सही मानों में पता हो जाये कि ये सब चीज़ें नाशवान हैं, अविनाशी तो फ़क़त आप हो। सारा वैभव-ऐश्वर्य राधा है, आप स्वामी हो। राधा आपका आवरण है, आप उसके आधार हो। 'खुश नहीं हरगिज़ तवंगर मालोज़र वाले अमीर'। फिर :—

तर्के दुनिया, तर्के उक़बा, तर्के मौला कर दिया।
तर्क का भी तर्क है, इस तर्क से दिल भर गया ॥

लोग कहते हैं मैंने इतना दान दिया, यह कर दिया, वह कर दिया लेकिन यह सब त्याग नहीं है :—

'वो त्याग क्या जो त्याग में फँसाये।
विराग क्या जिसमें राग आये ॥'

जहाँ त्याग की बात कही या सोची गई उसमें अहंभाव है। वह घोड़ा है, सवार नहीं है। दान में नाम नहीं आना चाहिए। जिसने गृहस्थी पोशाक छोड़कर भगवे पहन लिये वह तर्के दुनिया नहीं हुई। हम त्यागी हैं, हम संन्यासी हैं, हम महा मंडलेश्वर हैं, यह भी अहंकार है, आडम्बर है। सच्चा त्याग-विराग तो जनक की तरह होना चाहिए।

राजसुख ऐश्वर्य भोगते हुए भी उसमें आसक्ति नहीं थी। व्यास के पुत्र शुकदेव को जन्म से ही ज्ञान और विराग था। बारह साल तक माता के गर्भ में रहे, बाहर नहीं निकले। माता के कष्ट को देखकर व्यास जी ने शुकदेव जी से विनती की, "महाराज, आपकी माता को अत्यन्त कष्ट हो रहा है, अब दया करो, बाहर आओ।" शुकदेव जी बोले, "संसार दुःख की खानी है, मैं बाहर नहीं आता।" व्यास बोले, "अपनी माता पर तो दया करो।" शुकदेव बोले, "मैं इस शर्त पर बाहर आऊँगा कि सीधा वन को चला जाऊँगा।" और गर्भ से बाहर निकलते ही सीधे वन की राह ली। उनके पीछे-पीछे व्यास जी उन्हें पकड़ने को चल पड़े। रास्ते में एक तालाब में स्त्रियां नग्न नहा रही थीं। शुकदेव उधर से गुज़रे तो स्त्रियों ने कोई परवाह नहीं की। कुछ ही देर बाद जब व्यास जी गुज़रे तब स्त्रियों ने अपने अंग छिपा लिये। व्यास जी को स्त्रियों का यह व्यवहार उचित नहीं मालूम हुआ और बोले, "देवियो, मैं बूढ़ा हूँ तो तुमने मुझसे पर्दा किया, लेकिन मेरा जवान बेटा इधर से गुज़रा तो तुमने कोई पर्दा नहीं किया। ऐसा क्यों?" स्त्रियों ने उत्तर दिया, "महाराज, शुकदेव को नर-नारी में कोई भेद नहीं दीखता इसलिए हमने लज्जा नहीं की किन्तु आपकी दृष्टि में नर-नारी का भेद है इसलिए हमने आप से पर्दा किया।" व्यास उनका उत्तर सुन कर मौन हो रहे और आगे बढ़ गये।

शुकदेव की ब्रह्मज्ञान की गहरी जिज्ञासा देखकर व्यास ने उन्हें जनक के पास जाने को कहा। शुकदेव ब्रह्मज्ञान लेने जनक जी के दरबार में पहुँचे तो वहाँ नर्तकियाँ नृत्य-गान कर रही थीं। शुकदेव के मन में विचार पैदा हुआ कि नाच-रंग में डूबा हुआ राजा जनक मुझे क्या ब्रह्मज्ञान देगा? उलटे पाँव लौट पड़े। राजा जनक ने देखा और पूछा, क्यों

शुकदेव, कैसे आये और क्यों लौट चले ?" शुकदेव को जनक की बात सुनकर कौतूहल हुआ और बोले, "राजन् मेरे पिता ने मुझे आपके पास ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने के लिए भेजा था, पर यहाँ का दृश्य देखकर मेरे मन में विचार आया कि जो स्वयं विलास में डूबा है, वह हमें ज्ञान क्या देगा ?" जनक बोले, "इसका उत्तर तुम्हें कल मिलेगा।" अगले दिन राजा जनक ने नगर में महोत्सव की भव्य तैयारियाँ कराईं और सारा नगर बड़ी सजधज से उत्सव मना रहा था। शुकदेव राजा जनक के यहाँ पहुँचे, तो जनक ने उनके हाथों में तेल से भरा कटोरा रखवा दिया और दो जल्लादों को नग्न तलवारें लेकर शुकदेव के पीछे लगा दिया। बोले, "शुकदेव, जाओ मेरे नगर की शोभा और महोत्सव देख आओ किन्तु ध्यान रहे, कटोरे का एक बूंद तेल भी धरती पर गिरा तो तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर दिया जायेगा।" राजा की आज्ञा को शुकदेव टाल भी कैसे सकते थे। नगर के राजमार्ग से होते हुए, पूरे नगर की परिक्रमा कर, सन्ध्या को राजा के सामने हाज़िर हुए। राजा जनक ने पूछा, "कहो शुकदेव, नगर का महोत्सव और शोभा कैसी थी ?" शुकदेव बोले, "महाराज, मेरा ध्यान तो तेल के कटोरे पर था, मुझे क्या पता आपके नगर में कहाँ, क्या और कैसा था ?" जनक बोले, "शुकदेव, ऐसे ही इस राज-काज और सुख-ऐश्वर्य के बीच रहते हुए भी मेरा ध्यान चौबीस घण्टे मालिक की तरफ लगा रहता है और मुझे इनका कोई आभास नहीं होता। और यही विदेह अवस्था और सच्चा ज्ञान है :—

'हथ कार वल, ते दिल यार वल।'

सच्चा त्याग और तर्क मन से होता है, दुनिया के त्यागने की कोई आवश्यकता नहीं। ऐसे ही शुभ-कर्मों के

फलस्वरूप मनुष्य ऊपर के लोकों में, बैकुण्ठ में जा सकता है लेकिन कर्मों का प्रभाव समाप्त होने पर फिर धरती पर आना पड़ता है। सच्चे परमार्थी और सन्त उकबा या स्वर्ग के विचार को भी तर्क कर देते हैं। तर्के-मौला, अर्थात् सृष्टि के कर्त्ता-पुरुष ब्रह्मा-विष्णु-महेश के लोकों का भी त्याग 'तर्के-मौला' है। अन्त में इस त्याग के विचार को भी त्यागना ज़रूरी है :—

'तर्क का भी तर्क है, इस तर्क से दिल भर गया।'

परमदयाल जी महाराज ने इन सब मंज़िलों और अवस्थाओं के परे की हालत का अनुभव किया और हमें ऊँचा से ऊँचा ज्ञान दिया। इसके बाद कौनसी हालत उनकी हो गई थी :—

'चश्मे वहदत भी मिली, वहदत की मंज़िल देख कर।
कर रहा हूँ रात दिन, दुनिया की मंज़िल का सफ़र॥'

चश्मे-वहदत जीवन्मुक्ति की हालत है, जब आपको यह ज्ञान हो जाता है कि परमतत्त्व तो एक है जो हरएक के अन्दर विराजमान है, तब किसी से नफ़रत या द्वेष नहीं होता। सब में मालिक के रूप को देखते हुए, प्रेम का जीवन यापन करता है :—

'क्या है दुनिया ख़्वाब है, और ख़्वाब भी जाते फ़क़ीर।
दामोहिर्सो मालोज़र में, वह नहीं हरगिज़ असीर॥'

यह तर्क और संन्यास से भी ऊँची अवस्था है। यह चश्मे-वहदत, अर्थात् सब में मालिक को देखने से भी ऊँची हालत है। यह पता चल गया कि दुनिया वास्तविक नहीं है, पर इसका मतलब यह नहीं कि बिलकुल कुछ नहीं है। ख़्वाब देखते समय तो ख़्वाब पर शक़ नहीं होता जब जागते हैं तब कहते हैं कि अरे यह तो ख़्वाब था।" लेकिन ख़्वाब को एकदम ग़लत मानना सही नहीं है। ख़्वाब के अन्दर

ख़्वाब देखने वाला तो मौजूद है। स्वप्न में आप स्वप्न का अनुभव करते हो, गहरी नींद में आनन्द की अवस्था का अनुभव करते हो। अनुभव भी वास्तविक है और अनुभव करने वाले आप ही सवार हो, स्वप्न और आनन्द की अवस्था घोड़ा हैं। आत्मा भी घोड़ा है। सुषुप्ति की गहरी नींद में आपका शरीर, मन सब अचेतन अवस्था में थे पर जब उस अवस्था से जागे तो यह किसने अनुभव किया कि आप बड़े आनन्द की अवस्था में थे? और ऐसे आनन्द की अवस्था पिछले दस वर्षों में नहीं आई थी? घोर अचेतनता में आनन्द की तुलनात्मक अवस्था का अनुभव करने वाला अविनाशी परमचेतन तत्त्व ही आप वह सवार हैं बाकी शरीर, मन, आत्मा सब घोड़ा हैं। यही आपका असली आपा और "ज़ात" है। जिसे इस अवस्था का अनुभव ज्ञात हो गया वही परमदयाल फ़कीर चन्द जी महाराज की तरह 'ख़्वाब भी ज़ाते फ़कीर' है। उसकी दृष्टि में "ज़ात" के अलावा कोई चीज़ मूल्यवान् नहीं होती। उसे न किसी चीज़ की ज़रूरत है, न कोई लोभ-लालच। महाराज जी सच कहते हैं—"जिसे उसका पता चल गया, 'मालोज़र में वो नहीं हरगिज़ असीर।' वह मालोज़र का इस्तेमाल तो करेगा लेकिन इनमें बँधेगा नहीं। ऐसा फ़कीर कभी उदास नहीं होता। वह सद्‌गुरु क्या जो ख़ुद ही रो रहा हो वह तो अगले को भी रुलायेगा। सद्‌गुरु वह है जिसे परमतत्त्व का अनुभव है, उसका शरीर, मन, आत्मा सब आनन्दमय होंगे। ऐसे फ़कीर के लिए ही किसी फ़कीर ने कहा है :—

'ख़ाक में दुनिया मिली, और ख़ाक ही है वह मुदाम।
वह ख़ुशी से शादमाँ, रहता है हरदम सुबहो शाम॥'

फ़कीर हमेशा ख़ुश रहता है और ख़ुश रखता है। दुनिया ख़ाक में मिल जाये लेकिन मैं तो परमतत्त्व हूँ, आप

भी परमतत्त्व हो :—

'आबिदो माबूदियत, माबूद से आज़ाद है।
खुश मुजस्सम खुश है दिल, का रूह का वो शाद है॥'

ऐसे परमतत्त्वाधार स्वरूप सद्गुरु या फ़कीर को न किसी की पूजा करने की ज़रूरत है, न किसी से पूजा कराने की। उसे न पुजारी, न पूज्य, न पूजा की ज़रूरत है। वह सबसे पूरी तरह आज़ाद है।

तब भवानी बोलीं, "यही दशा शंकर की है। उन्हें क्या ज़रूरत आडम्बर और बनावट की? वह अपने आप में पूर्ण, सन्तुष्ट, जगत् को शरण देने वाले हैं। शंकर को समझने वाले दुर्लभ हैं, तू क्या समझेगा शंकर को? सद्गुरु को समझना, सद्गुरु होना है। फ़कीर के पास कुछ नहीं, पर कितनों को करोड़पति बना दिया। जिसने जो मांगा उसे दे दिया। स्वयं झोपड़ी में रह कर कितनों को महल वाला कर दिया। त्रिलोकी के नाथ हैं पर श्मशान में रहते हैं। क्या निराली शान! अनुपम! बेमिसाल!—

गये दोनों जहान नज़र से गुज़र,
तेरी शान का कोई बशर न मिला।
देखी हर जगह तेरी निराली फबन,
तेरा भेद किसी को मगर न मिला।
तेरे रहने का कोई मकान भी है?
तेरे मिलने का कोई निशान भी है?
तुझे देखा इधर तो इधर न मिला,
तुझे ढूंढ़ा उधर तो उधर न मिला।
कहीं दस्ते सवाल दराज़ नहीं,
किसी और पे यूं मुझे नाज़ नहीं।
कोई तुझसा गरीब नवाज़ नहीं,
तेरे दर के सिवा कोई दर न मिला।

ऐसे फ़कीर को पाने के लिए खुद फ़कीर बनना पड़ता है। ब्रह्मचारी कुछ और भी बोलने ही वाला था कि भवानी ने सखियों को चिल्ला कर कहा, "बन्द करो इसका मुँह अन्यथा मैं इस स्थान से जाती हूँ।" भवानी उठीं और जाने को क़दम उठाया कि क़दम उठा का उठा ही रह गया। न आगे पड़ा, न पीछे हटा। आश्चर्यचकित एकटक निहारती ही रह गईं। ब्रह्मचारी की जगह साक्षात् भगवान् शंकर प्रकट हो गये।

भवानी शंकर की शुभांगिनी हो कर पास बैठी हैं और कहती हैं, "भगवन्, मुझे उस परमतत्त्व राम की कथा सुनाओ।" शंकर ने गौरी को राम-कथा सुनाई। गौरी ने श्रद्धापूर्वक कथा सुनी और विश्वासरूप शंकर के साथ अभेद हो गई। गौरी-शंकर श्रद्धा-विश्वास के पर्याय हो गये। राधास्वामी के साथ मिल गई। इस हालत को कौन बतायेगा? जो खुद अनुभव कर चुका है। किताबें पढ़ने वाला विद्वान् नहीं बता सकता मगर यदि उसे अनुभव हो चुका है तो उसकी विद्वत्ता सोने में सुहागा हो जायेगी। महाराज जी ने मुझे यह काम करने को आज्ञा दी।

मनुष्य के अन्दर एक कुरेद पैदा होती रहती है। जब तक यह कुरेद मिटती नहीं, उसे चैन नहीं आती क्योंकि असल में आप अनन्त-अविनाशी हो। आप मरने वाले नहीं हो। जब तक उस परमतत्त्व आधार के साथ जुड़ने का आभास नहीं हो जाता, तब तक चैन नहीं आता, शान्ति नहीं मिल सकती :—

'जाको दर्शन इत्त है, वाको दर्शन उत्त।
जाको दर्शन इत्त नहीं, वाको इत्त न उत्त॥'

यदि आप को जीते जी सत्संग से शान्ति नहीं मिली तो और कहीं नहीं मिलेगी। सौभाग्य से वह सार-तत्त्व आप

के अन्दर मौजूद है, सत्संग द्वारा आपको अपने आप मिलेगा :—

'सत्संगति मुद मंगल मूला,
सोइ फल सिधि सब साधन फूला।'

सत्संग से आपके सारे काम बन जायेंगे। परमतत्त्व से आये हो, परमतत्त्व से मिल कर रहोगे। प्यारे से बिछुड़े हो, प्यारे से मिलकर रहोगे। राधास्वामी का मतलब यही है :—

जब दया गुरु की हुई, चरनों की भक्ति मिल गई।
सब निबलता मिट गई, निश्चय की शक्ति मिल गई।।

सब को राधास्वामी!

---

१. जिस दिल में रहम नहीं है उसे बेकार पत्थर समझो। जिस मुँह से मालिक की स्तुति न की जाये उसे सांप और बिच्छू के बिल के सिवाय क्या कहा जायेगा! जिस सिर में मालिक का सच्चा सौदा नहीं है वह सिर जिस्म का बोझ ही बोझ है।

२. यह कभी नहीं सोचना चाहिए कि एक चोर बिलकुल ही बुरा और एक साधु बिलकुल ही नेक और परहेज़गार हो। बहुत मुमकिन है कि चोर अपनी इस एक खराब आदत को छोड़ कर बाकी और बातों में साधु से कहीं अच्छा हो और यह भी हो सकता है कि साधु सिर्फ़ वेषधारी हो और अपने बुरे कर्मों की वजह से पूरा शैतान हो।

—दाता दयाल

मासिक सन्देश

परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो,

राधास्वामी, परमदयाल जी सहाई !

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको विदेशी दौरे के बारे में बहुत कम सूचना दी थी। जब हम मानचैस्टर से बस के द्वारा बर्मिंघम पहुँचे तो बस अड्डे पर श्री किशोर गुप्ता हमें लेने आये। ६ नवम्बर सारा दिन हम उनके निवास स्थान पर ही ठहरे और शाम को एक सत्संग भी दिया। इस सत्संग में श्री जगदीश गुप्ता, श्री दसौंदा सिंह और उसका परिवार, श्री लक्ष्मी नारायण और उनकी पत्नी शशि, श्री बख्शी सिंह और उनकी पत्नी सावित्री तथा श्री ओम प्रकाश शर्मा तथा उनकी पत्नी और बहुत से दूसरे लोग शामिल हुए। इस बार बर्मिंघम में आम लोगों के लिए सत्संग नहीं रखा गया क्योंकि हमें बहुत जल्दी "विश्व-धर्म सम्मेलन" के लिए अमेरिका जाना था।

७ नवम्बर को हम दोपहर के ३-३० बजे लंदन से न्यूयार्क पहुँचे। यहाँ पर हमें श्रीमती थैलमा कार्टर और श्री कक्कड़ हवाई अड्डे पर लेने के लिए आये हुए थे। हम उस रात को श्री सुदर्शन लाल के घर ठहरे। दूसरे दिन प्रात:काल में सानफ्रेंसिसको कैलीफोर्निया के लिए Eastern

Airlines हवाई जहाज़ से रवाना हो गया। भाग्य माता जी श्रीमती थैलमा कार्टर के साथ कार से मेरीलैण्ड के लिए रवाना हो गईं। सानफ्रैंसिसको में श्री माइक मोहरिक हवाई अड्डे पर मेरे स्वागत के लिए आया हुआ था। हम तुरन्त उसकी गाड़ी में Reno शहर के लिए रवाना हुए क्योंकि रात हो चुकी थी, आधे रास्ते में ही हम थक गये। माइक मोहरिक ने प्रस्ताव किया कि रात को कैलीफोर्निया राज्य की राजधानी Sacromento में वहाँ के विख्यात होटल में विश्राम किया जाये। मैंने उसके इस प्रस्ताव को स्वीकार किया अत: रात को हम वहीं ठहरे। प्रात:काल हम नहा-धोकर Reno के लिए रवाना हो गये। यहाँ पर यह बताना आवश्यक समझता हूँ कि Sacremento नगर में ही हमारे चण्डीगढ़ के सत्संगी श्री भट्टी रहते हैं। मुझे उस समय यह बात मालूम नहीं थी। पिछले महीने श्री भट्टी अमेरिका से मुझे होशियारपुर मिलने के लिए आये तब मुझे यह पता चला कि उनका निवास स्थान Sacromento में है। अब वह वापिस कैलीफोर्निया चले गये।

Reno में हम माइक के घर पर पहुँचे। इस नवयुवक की श्रद्धा का कोई पारावार नहीं है। यूँ तो इसका व्यापार बहुत अच्छा है और साल भर में करोड़ों का लेनदेन है लेकिन अभी तक उसने विवाह नहीं किया। सम्भावना यही है कि माइक की भागीदार शीला ही उसकी जीवनसाथी बनेगी। पिछली बार जब हम इसके घर ठहरे थे तो इन दोनों ने हमारी बहुत ही मेहमाननवाजी की थी और दोनों ने ही नामदान लिया था। इस बार जब मैं उनके घर पर ठहरा तो माइक ने मुझे कहा "शीला बहुत अच्छी महिला है। और आपके परामर्श के अनुसार मैं इसी से विवाह करने की इच्छा रखता हूँ मगर मैं यह देख रहा हूँ कि उसकी

रुचि गुरुमत के बारे में कितनी दृढ़ है। यदि वो मेरी आध्यात्मिक साधना में रुकावट हो तो मैं विवाह नहीं करूंगा।" इस नवयुवक के ये उद्‌गार साबित करते हैं कि उसके पूर्वजन्म के उद्‌गार बहुत अच्छे हैं। पिछले वर्ष जब हम माइक और शीला के घर पर ठहरे थे तो जल्दी में मेरा एक सफेद बन्द सूट माइक के घर पर रह गया था। जब हम सानफ्रैंसिसको के हवाई अड्डे और माइक के घर से आधा रास्ता तय कर चुके तो हमें याद आया कि सफेद सूट हमारे सोने वाले कमरे में ही रह गया। माइक ने कहा 'डा० शर्मा आप जहाँ कहें मैं उसे पार्सल करके भेज दूंगा।' मैंने उसे उत्तर दिया 'प्यारे माइक अब यह तुम्हारे लिए प्रसाद बन गया तुम ही उसे पहन लेना। इस वर्ष मैंने उससे पूछा कि क्या वह उस सूट को पहना करता है? तो उसने उत्तर दिया 'डा० शर्मा मैंने उसे अपने साधना के कमरे में टाँग रखा है और सुमिरन, ध्यान, भजन से पहले उसे मस्तक से लगा लिया करता हूँ। मैंने माइक की मिसाल इसलिए दी है कि एक करोड़पति होते हुए भी और विदेशी होते हुए भी उसकी श्रद्धा और आस्था की मिसाल मिलना मुश्किल है। जब भी हम अमेरिका जाते हैं तो माइक हज़ारों डालर खर्च करके हमें हवाई जहाज़ से तीन हज़ार मील दूर बुलाया करता है।

यह सब कुछ अपने आप हो रहा है। इंगलैंड में, अमेरिका में लोग मानवता धर्म की तरफ खिंचे आ रहे हैं। माइक को मैं सिर्फ एक साल पहले मिला था। इसी थोड़े अर्से में उसने मुझे दो बार अपने शहर में बुलाया और सत्संग कराया। इस बार तो मेरा ५ घण्टे का सत्संग था। यह सत्संग माइक ने इसलिए आयोजित किया था कि अमेरिका में भी परमदयाल जी महाराज की शताब्दी १९८५

से ही मनानी शुरू कर दी जाये। उसने मेरे आने से पहले अखबारों में समाचार छपवा दिया था और सब को एक यूनिटी सम्प्रदाय के गिरजाघर में इकट्ठा होने का बुलावा भी भेजा। उसे बहुत आशा थी कि इस बार विशेषकर परमदयाल जी महाराज की शताब्दी के कारण बहुत से लोग उस चर्च में सत्संग के लिए आयेंगे। पिछले वर्ष बल्कि ६ महीने पहले जून में भी इसी स्थान पर मेरा सत्संग हुआ था और उसमें मैंने सुरत-शब्द योग की व्याख्या की थी इसलिए माइक का अन्दाज़ा ग़लत नहीं था। सत्संग १० नवम्बर रविवार को होना था, दुर्भाग्यवश ६ नवम्बर को Reno शहर में ज़बरदस्त बर्फ पड़ी। २४ घण्टे के अन्दर ४८ इंच बर्फ पड़ने से सब सड़कें और सभी लोगों के मकान और मोटरगराज आदि बर्फ से ढक गईं। सड़कों पर मोटर-गाड़ी चलाना असम्भव था। माइक ने कहा "महाराज मुझे तो ऐसा लगता है कि तीन या चार आदमी आज १० बजे तक सत्संग के लिए पहुँचेगे" मैंने उसे तसल्ली दी और कहा "हमें लोगों की तादात के स्थान पर यह देखना चाहिए कि उनका भाव कैसा है। उसके साथ ही साथ मैंने उससे पूछा कि क्या उसके पास टैलीविज़न का कैमरा था या नहीं क्योंकि मैं चाहता था कि इस सत्संग का पूरा वीडियो टेप हो जाये। माइक ने कहा कि यद्यपि उसके पास वह कैमरा नहीं था फिर भी वह नया कैमरा खरीदने को तैयार था। मैंने उसे ऐसा करने से मना कर दिया।

१० नवम्बर को प्रातःकाल से बर्फ गिरनी शुरू हो गई लेकिन सत्संग के समय से एक घण्टा पहले बन्द हो गई। मैं माइक और शीला के साथ उनकी बड़ी कार में यूनिटी चर्च पर पहुँचा क्योंकि उसकी कार के टायर बर्फ पर चल सकते थे। हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ६-३०

बजे तक इतने श्रोता आये कि सारा हाल भर गया। बहुत से तो बर्फ के टायर लगाकर आये और बहुतों ने टायरों पर जंजीर बांध कर सफर तय किया। यह सब परमदयाल जी की कृपा थी। वह सभी श्रोता बहुत चाहते थे कि उन्हें सुरत-शब्द योग पर, सुमिरन-ध्यान-भजन पर कुछ और बताया जाये। उनमें से आधे से ज़्यादा ऐसे लोग आये थे जिन्होंने मेरे पिछले सत्संग के आधार पर सुमिरन, ध्यान, भजन का अभ्यास भी शुरू कर दिया था। माइक को इतनी भीड़ देखकर बहुत खुशी हुई।

एक और अजीब बात यह हुई कि हमारे उस चर्च में पहुँचने से पहले एक अमरीकी औरत ने टैलीविजन का कैमरा लगा रखा था। मुझको मिलते ही उसने मुझे कहा "डा० शर्मा, मैं समझती हूँ कि आपका यह सत्संग एक खास सत्संग है इसलिए मैं लगातार ५ घण्टे इसका वीडियो टेप लूंगी, और उसने ऐसा ही किया।

मैं आपको यह बात इसलिए बता रहा हूं क्योंकि मानवता धर्म में गुरु की आज्ञा का पालन करने से सब काम बन जाते हैं। ज्यों-२ मैं देश-विदेश में धर्म और दर्शन के सम्मेलनों में गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए सत्संग दे रहा हूँ मैं देखता हूँ कि कोई छुपी हुई ताक़त मेरे से सत्संग करा रही है।

उस महिला ने हमें वीडियो टेप की कापियां भी बिना शुल्क के दीं। ११ नवम्बर को मुझे Reno शहर से लोसएंजल्स कैलीफोर्निया जाना था। बर्फ पड़ने के कारण हवाई जहाज़ों का आना-जाना बन्द हो चुका था। वहां के लोगों का कहना है कि ५० वर्ष तक ऐसी जबरदस्त बर्फ नहीं गिरी फिर भी हम हवाई अड्डे पर गये। वहां पता चला कि करीब-२ सारी हवाई जहाज़ों की उड़ानें स्थगित कर दी

गईं। दो-चार उड़ानों के आने की सम्भावना थी। हमारी उड़ान का नं० चौथा था। पहले तीन हवाई जहाज आधा-२ घण्टा हवाई अड्डे पर मंडराने के बाद वापिस चले गये। मालिक की मौज से मेरी उड़ान ही हवाई अड्डे पर उतरी और मुझे लौसएंजल्स ले गई। वहाँ पर कुछ घण्टों के लिए ही ठहरना था। हवाई अड्डे पर एक महिला रूप वायला जो एडवोकेट है और अमेरिकी सरकार की अफसर है, हवाई अड्डे पर मौजूद थी। इसके अलावा श्री लाल सिंह जी के सुपुत्र डा० गुरुबचन सिंह और उनकी पत्नी कैथी सिंह भी मुझे मिलने के लिए पहुँच गये। कैथी बहुत ही अच्छी महिला है। उसने हम सब को एक बहुत अच्छे रैस्टोरेण्ट पर शाकाहारी खाना खिलाया। इसके बाद मैं सैण्टामेरिया डा० सुरेश लोड़ा के पास गया और वहाँ एक दिन ठहरने के पश्चात् लौसएंजल्स के रास्ते से सैनोए शहर में पहुँचा। यहाँ रात को रहकर ही दूसरे दिन मैं सार्फेसिसको से विश्व-धर्म सम्मेलन में शामिल होने के लिए न्यूयार्क New Jersey पहुँचा। वहाँ पर भाग्य पहले ही पहुँच चुकी थी।

सम्मेलन की स्वागत समिति वहाँ मौजूद थी इसलिए हमें तुरन्त कार के जरिया मैकोफी के बहुत बड़े होटल में ले जाया गया। वहाँ पर हमारे ठहरने और खाने का बहुत अच्छा प्रबन्ध था। इस सम्मेलन में करीब ६० देशों से आये हुए ६०० धर्म शास्त्री, धर्म के नेता और दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर शामिल हुए।

दूसरे दिन से सम्मेलन का सत्र शुरू हुआ उसमें अलग-अलग विषयों के मुताबिक अलग-अलग मंडलों में सभी भाग लेने वालों को बाँट दिया गया। मेरे मंडल में ख़ासकर अमेरिका, यूरोप, साउथ अमेरिका और कैनेडा के विद्वान् मौजूद थे। उनमें से एक भारतीय विहार के आर. आर.

दिवाकर भी उपस्थित थे। यह दिवाकर गाँधी जी के शिष्य हैं और कांग्रेस सरकार में मिनिस्टर और गवर्नर रह चुके हैं। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि उन्होंने राजनीति को छोड़कर अध्यात्म को अपना लिया है। मेरा लिखा हुआ शोधपत्र सुरत-शब्द योग पर था। उसे सभी विद्वानों ने स्वीकार किया और किसी ने उसका विरोध न किया। मैंने यह बताने की कोशिश की थी कि ईसाई और यहूदी धर्म में भी सुरत और स्वामी, प्रकाश और शब्द को माना गया है। ईसाई धर्म के विद्वानों ने और यहूदी धर्म के विद्वानों ने यह तो मान लिया कि हज़रत मूसा और हज़रत ईसा ने प्रकाश को अपने अन्तर में प्रकट किया। उन्होंने सिर्फ यह आपति पेश की कि उनके धर्मों में जीवन्मुक्ति नाम की कोई वस्तु नहीं है। जब मैंने उनसे पूछा कि आपके धर्मों में जब मौन प्रार्थना की जाती है और जब आप ४० दिन तक व्रत आदि रखकर आध्यात्मिक अनुशासन पर चलते हैं तो उसका फल क्या होता है ?

दोनों धर्मों के नेताओं ने कहा कि आध्यात्मिक अनुशासन के बाद उन्हें यह पता चल जाता है कि ईश्वर की इच्छा क्या है ? ऐसा पता लगाने से वह अपनी इच्छा को ईश्वर की इच्छा पर छोड़ देते हैं। मैंने जवाब दिया इसी का नाम जीवन्मुक्ति है। इसी को मौज मालिक कहा जाता है। यह सुनकर उनको बहुत सन्तोष हुआ और उन्होंने कहा कि मेरे प्रवचनों से उनको यह ज्ञान हो गया कि धर्मों का परस्पर विरोध एक भ्रम है।

इसी प्रकार भाग्य माता जी के मंडल में भी राधा तत्त्व पर जो शोधपत्र उन्होंने पढ़ा उससे सभी धर्म वालों को सन्तोष हुआ। इस प्रकार ६ दिन लगातार इस सम्मेलन में भाग लेने के पश्चात् हम बर्जीनिया गये। वहाँ पर

२३ नवम्बर को उस A.R.E. की संस्था में परमदयाल जी महाराज की शताब्दी मनाने के लिए सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें परमदयाल जी महाराज ने अपने जीवन-काल में चार बार सत्संग दिया था। यह सत्संग भी बहुत सफल रहा और इसकी कैसेट में रिकार्ड की हुई प्रतियाँ अमेरिका में हमारे सत्संगी बोब मैकवीन के पास मौजूद हैं।

संक्षेप में सिर्फ ६ दिन क्लीवलैण्ड में रहने के बाद और उससे पहले दक्षिण कैरोलीन में एक नये केन्द्र खोलने के बाद हम ११ दिसम्बर को एयर इण्डिया की उड़ान से देहली के लिए रवाना हुए। १३ दिसम्बर रात को ११ बजकर ५५ मिनट पर हम पालम हवाई अड्डे पर उतरे और कुछ ही घण्टों में १४ दिसम्बर की प्रातः हुई और मैं चन्द्र नेगी की कार से होशियारपुर के लिए रवाना हो गया। १४ दिसम्बर शाम को होशियारपुर पहुँचे। १५ दिसम्बर मासिक सत्संग देने के बाद मैं उसी शाम को रेलगाड़ी के द्वारा श्री सेठी साहिब और साधना के साथ देहली रवाना हुआ।

समय और स्थान की कमी की वजह से मैं आपको सिर्फ यहाँ तक ही दौरे की सूचना दे सकता हूँ।

भगवान् शिव जगत् का संहार इसलिए कर सकते हैं कि उनमें तप की शक्ति है और शेषनाग भी तप की शक्ति के कारण ही पृथ्वी के बोझ को सिर पर उठाये हुए हैं। तप की महिमा वर्णन करने के लिए पुस्तकें लिखी जा सकती हैं। तप का एक अर्थ क़ुर्बानी है। इससे पहले कि मैं तप की अलग-२ किस्मों की व्याख्या करूँ मैं एक उदाहरण से बताना चाहता हूँ कि सन्तमत में तप का क्या महत्त्व है। यह उदाहरण परमदयाल जी के अपने अनुभव पर आधारित हैं।

बहुत वर्ष पहले परमदयाल जी के दरबार में एक सिक्ख पति-पत्नी उनका सत्संग सुनने आते थे। उन दोनों

ने कई बार परमदयाल जी से प्रार्थना की कि उन्हें पुत्र प्राप्ति के लिए प्रसाद दें। परमदयाल जी ने उनसे कहा कि उनके भाग्य में पुत्र नहीं लिखा है। लेकिन वह दोनों लगातार परमदयाल जी से प्रार्थना करते रहे। एक दिन परमदयाल जी ने कहा, "देखो, तुम मेरे पीछे पड़े हुए हो, मैं तुम्हारी पत्नी को प्रसाद तो दे दूंगा लेकिन पुत्र के पैदा होने के बाद यह मर जायेगी। उस सिक्ख की पत्नी ने स्वीकार कर लिया कि वह मरने को तैयार थी। परमदयाल जी ने उसे प्रसाद दे दिया और उस स्त्री का गर्भ ठहर गया। जब उसके गर्भ को ६ मास बीत गये तो उसका पति परमदयाल जी के पास आकर रोने लगा और कहने लगा कि महाराज आप समर्थ हैं, आप सब कुछ कर सकते हैं। अब मेरी पत्नी के प्रसूता होने में तीन महीने बाकी रह गये हैं अगर वह मर गई तो मैं बच्चे को कैसे पाल सकूंगा। कृपा करके मेरी पत्नी के प्राण बचाइये। परमदयाल जी ने कहा "अच्छा वह एक शर्त से बच सकती है कि तुम कल से हर रोज़ दिन के १२ और १ बजे के बीच में ५ मिनट के लिए मुझे मिल जाया करो। इसमें चूक मत करना। मैं कहीं भी क्यों न होऊं तुम मुझे ५ मिनट के लिए जरूर मिला करो। उस व्यक्ति ने परमदयाल जी की आज्ञा का पालन किया और हर रोज़ १२ और १ बजे के बीच में दर्शन करता रहा। तीन महीने के बाद उसकी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया और वह मरी नहीं। यह उसकी छोटी सी कुर्बानी या तप का फल था।

तप के बारे में अधिक व्याख्या आने वाले मासिक सन्देशों में दी जायेगी। इन शब्दों के साथ मैं सब को इस मास की सद्भावना भेजता हूँ और चाहता हूं कि आप सब सुखी रहें और आपकी आत्मिक उन्नति हो।

सबको राधास्वामी !

आपका फकीरमय
मानव

---

१. जो आँखों से गन्दगी खाता है, जो ज़ुबान से गन्दगी को चखता रहता है, जो कानों से गन्दगी की बातें सुनता है वह एड़ी से लेकर चोटी तक गन्दा बन जाता है। तुम इस बात को जानते हो जहाँ गन्दगी ज़्यादा है वहीं कीड़े ज़्यादा पैदा होते हैं और कीड़े इसी जगह को नोचते-खसोटते और दुःखी करते हैं। मन के अन्दर जो इस तरह गन्दगी को भरेगा कैसे मुमकिन है कि उसका मन चंचल न हो इसमें कीड़े न पड़े हों और वही कीड़े इस मन को विचलित न करते रहें यह मामूली सी बात है जो हर सत्संगी समझ सकता है।

२. ईश्वर की पूजा लोग खुदगरज़ी के ख्याल से करते हैं। कोई दौलत मांगता है, कोई औलाद मांगता है, कोई इज़्ज़त-हकूमत का सौदाई बना हुआ है, कोई सिद्धि-शक्ति हासिल करने के लिए सख़्त से सख़्त मेहनत करता है। सोचो तो सही यह ईश्वर के प्रेमी हैं या दौलत, औलाद और इज़्ज़त-हकूमत के प्रेमी हैं।

—दाता दयाल

ENGLISH SECTION

Of

Manav Mandir

A Paper devoted to the Social, Cultural and Spiritual Welfare and uplift of Mankind all over the World.

BE MAN

March 10th, 1986.
MANAVTA MANDIR
Hoshiarpur, (Pb.) India.

Data Dayal Maharishi
Shivbart Lal Ji Verman
M A, LL.D.

THRESHOLD THE NINE

Entry into the Kingdom of Heaven
(Method of Devotion)

In fact the kingdom of the Father lies beyond. Here below are the kingdoms pertaining to Spirit, mind and matter. Spirit in the puritan or in the purest form exists in the spiritual region which expresses itself as the causal body. It is the predominant factor though in that state it is not alloyed with coarse or subtle matter. Nevertheless the seed matter is still there and it serves as the cause of body. Just below it is the kingdom of mind where the spirit entity is allied and alloyed with the mind-principle which though of vital importance and predominant in its sphere is subordinate to the spirit. This forms the subtle body. Still below it is the kingdom of matter where matter in its multifarious forms seems to prevail and has enveloped the spirit and mind both just like the mantle of ashes covering over a spark of fire. This becomes the coarse body that undergoes changes now

and then. The emanent spirit, apparently overpowered by matter and mind, is not idle but effects both the body and the mind in a curious way.

These three kingdoms exist in the human body and form distinct portions of it. We designate them as causal, subtle and gross bodies.

What is in the human body exists also beyond it as the triune body of the Deity ruling and controlling and ordering the economy of the arrangement under him.

We call them universes which in fact and from point of view of humanity are of three kinds. First, the universe consisting of forms or bodies material. Second, the universe consisting of ideas and mental conceptions which we call the mental univers. The third is the ultra-universe consisting of the cause of which the subtle and the gross are the effects. We call it causal universe.

These three kingdoms should be crossed before entry is acquired into the kingdom of Heaven or rather the kingdoms of grace.

We regret for repeating this portion of our discourse again and again but it is with some purpose, and the purpose is to enumerate and point out the very many kingdoms that are to be distinguished from that which is the Goal, the *Locus Standi*, the *Sanctum Sanctorum* of the devout souls.

Though we have described this intricate and delicate subject comparatively in a comprehensive manner, still we feel there is something wanting, and neither justice is done to the subject nor is it made exhaustive.

To make it clear, we give below how the descent

was made downwards. The knowledge of this will enable the votaries to make ascent upwards and achieve spiritual elevation.

The Kingdom of God is both static and kinetic. The static is above and is changeless, formless, nameless, etc. The Kinetic is below where there is a sort of polarization of energy. When aroused to action this energy descends below and its substance which is atomic matter in nebulous condition begins to rotate and to circulate forming a "whirling cave" where the seed form takes its root and the rotation continues. This is the ultra-universe which is causal. Within this causal circle, the currents of creation flowing from it, get themselves located in circular or globular forms for they partake the shape of the motion which is always in the form of a circle. These again mingling together give birth to mental substance wherein is the foundation of law and order. This is what we call the subtle universe. From this mental-circle the creative outflow descending still downwards, creates in the term the third universe which consists of bodies and wherein are born the embodied entitles of various sorts. This is the gross universe. This body-circle has got stored up in it all the previous impressions, and a careful study and critical outlook and a trained eye can detect them all. So, causal, subtle and gross are triune. It is out of them that the idea of Trinity and Tri-unity have sprung up. Being endowed with causal, subtle and gross elements, the embodied entinity in the form of man differentiates and investigates and tries to grasp the cause which in his mind is inclusive in all. And

hence the conception of the trinity and the triune.

But what is this energy ? It is only Sound-principle which was in the beginning, which is in the present and which will exist in future. References to this Sound-principle exist in the Scriptures of various religions. For instance, the opening verse of St. John's Gospel alludes to it saying :—

"In the beginning was the Word ; the Word was with God, and the Word was God. The same was in the beginning with God. All things were made by Him and without Him was not anything made that was made. In Him was life and the life was the light of man. And the light Shineth in darkness and the darkness comprehendeth it not......Word as made flesh and dwelt among us......"

Energy as Sound-principle and Sound-principle as Energy. Though the theme of various spiritual "eye-witnesses and ministers of the Word" who delivered the message onwards, has not been fully explained by them. It has remained a riddle and a "sealed book" which though hinted here and there is wanting in exposition. They are fully and in detail explained in the scriptures of the Radhaswami Faith. Apparently it seems that sound is the product of two objects coming in contact with each other. It is so. But sound in its essential form is something different as well. It is the Reality. It is the essentiality and it is the principle that pervades the universe. It is "the Law". When absorbed in itself it is nameless. When devolutionized, when involutionized, and when evolutionized, it manifests itself in diverse names and forms. It is sound-principle that

creates everything differentiated and undifferentiated, and it is only in the Sound and through the instrumentality of Sound that every object finds its thorough and complete explanation. Sound explains Sound. Sound creates Sound. And Sound manifests as Sound.

What is God ? A Sound. What is Creation ? A Sound. What is man ? A Sound. As a school-boy repeats and recites the grammatical formula "noun is only a name," "noun is only a name"......so we might say that "any and every form of existence is only Sound".

This sound - principle has been enumerated as of four kinds :—

1. *Para* (par-excellence, ultra, final. beyond transcendent or supreme).
2. *Pashyanti* (visible, radiant, seen).
3. *Madhyama* medicore, mixed, medial).
4. *Taikhasri* (audible, articulate, external manifest).

No alternative is left to us but to have recourse to Sanskrit terms used in the yog-scriptures. Though we are trying withal to express them in English equivalents yet translation is a translation. Much of the sense of the original words is lost in giving it a different linqualistic garb.

In the highest or static state alluded to above, the Sound-principle is supreme and inaudible and invisible, In tqe causal region below *i.e.*, in the second stage, it is visible but visible when when intuitioned and realized. Lower in the mental region, *i.e.* in the third stage it acquires the middle condition. It is mixed and both audible and visible. Still below in the material or

physical region, *i.e.*, the fourth stage of descent in the embodied creatures it finds expression through the vocal organs as audible or articulate sound.

In the static condition, the sound is supreme and beyond conception. In the causal universe, it is invisibly visible and is being feet. In the mental universe it is mixed and both audible and inaudible in the gross universe it is audible. These are the different stages in which the sonnd-principle made its descent and manifested itself in various names and shapes and bodies for the so-many creatures and creations are nothing but sound embodied. Realize the Sound as the essential principle and then you will be able to realize the truth.

In its direct desent it found full expression in man who is the reversion of the same principle embodied. He is the "Word made flesh". The Son, the descendant.

To understand this principle of reversion, let us look at the constitution of man. He appears to be quite the reverse of other creatures. Look at the tree at the brink of the lake reflected in the placid waters with its roots coupled with those of its shadow. The shadow is the reverse of the original and the original is the reverse of the shadow. In the similar manner, if you consider the creation as a direct sweep or process of formation, you will find man moulded the reverse or inverse of it. Compare him with a tree to get the proper sense of the idea that underlies our statement. A tree has its roots fixed in the earth but the root (or head) of man is upwards and moving in the atmosphere. The branches of the tree are up-turned while the limbs

and organs of man are down-turned. The tree casts its seed upwards while man casts his seed downwards. Man therefore is the reverse of tree, only the tree is immovable while man is movable, yet this too is a reversion of movement. The resemblance is complete in their organism also. Both are endowed with skin (bark), flesh (pulp), bones, marrow, blood (sap) tissues, nerves, feelings, sensations, etc., etc. Man eats and drinks through his mouth which is in the head and a tree eats and drinks through its mouths which are in its root. Diet is supplied throughout the body of both according to the same law of designation. As man is the epitome of all that exists so this creative economy finds itself fully and completely reflexed in him in his apparently reversed physical system.

In the lower region of the human body the kinetic state of energy exists as invisible and inaudible ultra-sound in the rectum ganglion. The invisibly visible sound exists in the gaglion of the navel. The mixed and inaudible sound gets itself reproduced inside the heart-ganglion. The last stage, the externalized sound-manifestion finds expression in the articulatory process of the throat-gland.

Param Sant Param Dayal Faqir Chand Ji Maharaj

METHODS FOR LIFE'S REFORM

Reform thee, thy human life ;
thou my friendly Surat.
Come soon under refuge of Lord ;
develope thou love within thee.
Get head line filled, with vermllion of devotion ;
beg for best ornamentation.
Forgiveness, head-dress, mercy as Sari ;
wearing go to lord's court,
Enjoy the Bliss of Lord's Palace ;
throwing dirt upon this world.
Radhaswami the True-Lord ;
His Holy feet keep in thy mind.

In this hymn, a thought for reforming human life is given. For the reformation of my life, Hazur Data Dayal Ji imparted me NAM in 1905 A.D. At that time I had determined that I shall speak my experience of life to this world.

After a long search I am to say that this NAM has led me to such a sublime stage, where neither Dharam nor sect exists, where neither Guru nor disciple exists ; where neither Lord nor the devotee exists and neither

the deed nor the doer exists. We all have come from that primary stage. Radhaswami Dayal has referred to this Truth in his hymn on Jayesth Month and Kabir Sahib has referred to this sublime-Truth in his hymn entitled "Adi-Dham".

Pandit Ji has come to me from Kurukshetra and he wants that I should impart NAM to him. I am not an educated man. I am not an orator. I express my experience in very simple language. When some unknown man comes to you, you ask him his name some other things concerning his life or you become anxious to know about that man. He tells you his name and other particulars asked for. Similarly, when I came into this world, I developed an anxiety to know —who am. I after a long struggle I have known who I am. So, what is NAM? It is to reveal to the novice his identity and his souece from where he came to this world. You study the human life around you, A woman gives birth to a child and hands over that child to some one. If that child is not told about his father, his family and his real home, he would not know anything. When you are asked about your parents you tell that such and such are you father and mother. But we do not have any proof thereof. At the time of birth we are not aware of our parentage. But the people around us tell us about our parentage and our family, as I was told that my father is Sh. Mast Ram and mother Smt. Parvati Devi and I was born in village Bhanjhal. When I heard this all, time and again, I was convinced about my parentage and family. This fact was further confirmed by the love and affection of my mother and father for me. Similarly this NAM

has its importance for the novice. Beginner is ignorant about his source. He does not know from where he has come, who is his creater and where shall he go? It is only the Guru or a realised man who guides the seeker to follow a right path for self realisation. You can know your "Self", your origin and your purpose of coming to this world only in the company of the saints or the realised.

Whatever Counsel or advise a Guru gives to his disciple, that is known as NAM, but people do not act upon the advice of the Guru. They lay more stress upon the repetition of the spoken word. Pandit Ji has come to me for initiation. For our return to our original abode our sages have given Gayatri Mantra or Paranayam Mantra to the Brahmans, Mantra means, opinion, Counsel, advice or method. It is to behold the light reyond the three stages of awakening, dreaming and sound sleep. This light within is your real promptor or an inducer. But, these Brahmans do not behold the light within. They simply mutter the mantra. The Paranayam Mantra also directs the initiate to traverse the inward path to this stage of light within as, Om Bhur: Bhuve: Swa: Maha: Jana, Tapa: and Satyam. But nobody, tries to behold the light within. They simply practice to behold their breath by closing their nose Similarly the followers of Radhaswami faith have gone astray from the real path of truth. They have memorised "PANCH—NAM" (five names). They believe in muttering SEHASRAKAR, ONKAR, RARANKAR, SOHANKAR, and SATYAKAR. They do not understand the significance of these words. Then what is NAM—DAN?

Reform thee, Thy human life ;
thou, my friendly Surat.

You have got this human body. Realise its importance and reform and improve your life. What is meant by reforming or improving your life ? It means that you should have happy life ; you should have food to eat ; you should have clothes to wear, you should have a house to live in, you should have work to do and you should attain liberation from the cycle of transmigration. This is the real reformation or improvement of your life. Those who advise you to renounce this world, they are not sane people. To live a happy life, it is essential that you should be self—sufficient, otherwise you cannot have physical and mental peace. You must have means to live a happy and blissful life and above all you should know the skill or the path of returning to your original adode. This skill of returning to your original home is known as NAM. From NAM I have known the path of return to my original home and I have also known the purpose of my coming into this life. All of us come here to live happily and after living a joyful life we all are to return to our True-home. The object of life is Bliss, Joy and Peace.

Among the five names referred to above, the first name is SEHASRAAR. These are the teachings of the saints. In the Hindu scriptures this centre of SEHASRAAR is know as the centre of Light as "Bhoor-Bhuvah : Swa : Tatsawitur-Varenyam." What happens at this centre of SEHASRAKAR ? Light shines and the sound of conch and bell is heard there.

The teachings of Radhswami faith also refer to this very truth of this stage. By meditating at this centre our mind becomes still By beholding the inner Light or by listening to the inner sound at this centre, your will power shall become strong and then every desire of yours shall get fulfilled. I again say that your own desire shall be fulfilled. The Brahmins of the past used to accomplish the Gayatri Mantra in its true sense. It was due to this fact that they could get any thing of there choice even in the Jungles Perhaps you know, that when Bharat along with his huge army went to see Lord Rama in the Jungles, revered sage Bharadwaj with the power of his thought served food to the entire army of Bharat. This NAM is of the first stage.

I do not impart NAM. I do not make anyone as my disciple. In 1942 A.D. an event took place in my life. A lady from Jabbalpur with her three children and her husband came to me at Ferozepur via Hoshiarpur. She used to meditate at the centre of Light within and see my form in a red coloured sun. She also used to listen the word "OM" or the sound of Mridang within. She come to me and pleaded, "Maharaj Ji, please ask my husband to take care of these children. They disturb me and do not allow me to sit for meditation regularly." I enquired if she had her own mother. She again replied in negative. Her husband was employed in telegraph department and as such he used to remain away on his duty from 8 A.M. to 8 P.M. I have experienced that he or she who meditates at the second stage within, his or her inner desire must be fulfilled. This is the benefit of remem-

bering NAM. He who repeats NAM regularly his wishes are granted. On the basis of my experience and observations, I told Sh. Wali Ram Hakim that as this lady meditates at the second stage, all her three children would die. This was my observation about that lady at that time. While leaving, that lady touched my feet and I said to her, "Whatever you have begged from Data Dayal Ji Maharaj, you shall get." Within a period of nine months, all her three children passed away. At this incident I felt awakened and I cautioned myself saying, "Faqir Chand, if you would continue to impart NAM to one and all they would meditate and their inner desires good or bad, would be fulfilled. So by imparting NAM you will be committing the greatest sin." Thus I realized, that, "NAM should be imparted to those alone who deserve it. After this incident I have not imparted NAM to anyone and also I did not disclose this fact to anyone. Because in Radhaswami faith or in the path of saints a thought is given that more the individuals you get initiated, the more you shall be benefitted To take people to a particular Guru and get them initiated is considered as the most virtuous deed. I do not comment upon this practice. I deliver discourses and tell the art of living a happy life The basic need is to make one's thoughts pure and desires chaste. To keep mind and thought pure, I tell some methods and techniques, but I do not import NAM.

About seven years ago, I went to Agra. From there I brought the sacred book entitled "PREM-BANI" written by His Holiness Hazur Maharaj Rai Salig Ram Sahib, the Satguru of Hazur Data Dayal Ji

Maharaj. In this sacred text, His Holiness has very clearly written, that those who have impure minds; those who cherish enmity, jealousy and hatred in their minds, those who do not want to put a check upon their destructive and bad thinking and those who are unable to have control upon their wrong thinking, should not at any cost undertake this practice of Surat-Shabad-Yoga. If they do this practice, they shall suffer heavily. The Hindu scriptures also refer to the same truth, that if a Shudra happens to listen the Gayatri Mantra, put a block in his ears, so that he may not be able to listen again. Shudra is not he, who is born in the family of a Shudra (untouchable), but Shudra is he, whose mind is not pure and he nourishes hatred, enmity and jealousy in his mind. I dare say, that those who are imparting "NAM" to thousands of people at different centres they in fact are not doing good to the ignorant people. NAM should be imparted to those alone who are fit for it. The primary thing is Sat-Sang. Sat-Sang makes the seeker fit for initiation. So, it is essential that an individual should be given Sat-Sang till he becomes capable of understanding the Truth. Perhaps, this Pandit Ji has some relation with me from the past life, otherwise. I do not impart NAM to anybody. I give Sat-Sang and those who understand my word and act upon it, that is NAM for them. I do not have any desire to become Guru and make disciples.

I am explaining the first stage or centre of SAHASRAR. He who meditates at this center, his wishes are fulfilled. At this centre every meditator enjoys

the sight of light. There are very few seekers who feel the necessity of going beyondthis centre and they do not reach the higher stages. In the ancient times the Guru used to initiate his disciple to the first stage and the disciple used to make himself perfect in meditation at that stage. Thereafter Guru used to see the inward progress of his disciple, he used to reveal the secret of second higher stage and tell him the method of meditation at that stage. But, at present the entire course of inward practice from A to Z is revealed in the very first sitting, and the result is that neither their disciples underetand anything about SEHASRAKAR, ONKAR, SOHANKAR and SATYAKAR nor do they ever succeed to reach these centres. Not only that the Gurus have adopted another method of exploiting the ignorant masses. They tell their disciples that they may follow the path of inward practice or may not. Sat-Guru shall surely come to accompany them at the time of their death. The poor disciples, with such an assurance from their preceptors, neither make any improvement in their lives, nor undertake the inward path.

"Rolling stone gathers no mass."

Such a state of affairs has moved me and I am obliged to carry on the dictates of His Holiness Hazur Data Dayal Ji Maharaj and thus I speak the truth, so that I may free myself from the debt of my Guru. I dare say that, we Gurus and Mahatmas have befooled you. I emphatically say, that inward practice is most essential for you. You can cover the inner stages only by inward practice. When you complete inward

practice of all the states you shall automatically become free from all the worldly desires. This world shall remain as it is. You go on with your regular inward practice. After completing the practice of first two stages, you are to meditate at the third stage which is known as Trikuti. What happens by meditating at Trikuti ? The meditation of this centre would help you to know or have the knowledge of anything that you wish to know. Keep an image of your Ideal in your forehead and meditate upon this holy form. This practice would help you to attain knowledge. All the scientists are the meditators of this very centre. This stage of Trikuti is known as the centre of OM, which means creation, sustenence and destruction—one thought oozes, it then sustains for sometime and vanishes thereafter. This is the centre of Trikuti. Those who meditate at this centre for the attainment of Divine Knowledge, they attain it and those who meditate here for worldly knowledge they attain worldly knowledge. Our sages and saints of the past wrote the great volumes of Vedas from this very centre. The knowledge of music is also the creation of this very centre. In a nut shell it may be said that the entire knowledge of science, music, religious scriptures and the worldly knowledge is the creation of this centre of Trikuti. He who wants to attain the knowledge of a particular thing, he should make an ideal of his desired thing and then meditate upon it on this centre of Trikuti. His regular meditation and Sumiran of that particular thing would fulfill his desire and he would become Perfect in it.

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

I myself follow this practice. It is due to this fact that I speak always a new thing. why? Because, I have an object of knowing the Reality or Truth. As and when I dwell at this centre of Tri uti, I give a new thought to the world. This stage of Trikuti is the centre of OMKAR and this "OMKAR" or Brahma is the creator of this world By dwelling at this centre of Trikuti and with the help of "OM" (Brahma) you are to attain the spiritual knowledge. "OM" has a most sublime and significant place in the Hindu scriptures. All Hindu Mantras start with OM, as :— OM BHOO, OM BHOOWAH, OM SWAH, OM JANA, OM MAHA, OM TAPA and OM SATYAM. This is the key for you upward journey. This is a gate to sublime knowledge. Among Muslims this stage is known as "AREFAN". This very centre of Trikuti or "OM" is the source of worldly as well as spiritual knowledge. When you feel tired from your worldly pursuits of life, you desire for rest. Similarly, when a seeker feels tired from a regularly meditation at this centre of Trikuti, he yearns for something more. Thereafter come the stages of Sunna and Mahasunna i.e. Savikalapa Samadhi and Nirvikalpa Samadhi. This state of trance is known as "SARANG" or "RARANG—SARANG". Hindu scriptures refer to this stage as the stage of "SHUDH—BRAHM". Here at this centre the creative energy becomes completely pure. All its impurities vanish away at this centre. So, when your mind becomes pure at this centre, you attain peace. This is the third stage, where you enter a state of Trance. You lose consciousness of your mind and your intellect does not work here Generally the

meditators do not like the stage because this is a state of intertness Then comes the fourth stage, the stage of "SOHANKAR". At this stage your mind vanishes away. Your soul remains alone here and it realises, itself at this stage. So when "Self" is realised, it does not come in the domain of mind. When your "Self" realises itself, then it does not come under the sway of mind so easily. Beyond this stage comes the state of "SATYAKAR", where your soul or Self merges with the Supreme-Self and loses its own entity. These are the five NAMES or the stages.

These five stages or Names are also referred to iu Hindu scriptures. But there they are known with different names as :— "ANNAMOY KOSH", PRANAMOY AKOSH", "MANOMAY KOSH", "VIGYANMAYKOSH" and "ANANDMAYKOSH".

Beyond these five stages is our origin, from where we have come down to this existence. So, Guru's duty is to lead the disciple through all these stages of the highest realm of our origin. His Holiness Hazur Data Dayal Ji was kind enough to lead me beyond these stages. I was very much lost in the inner visions and colours For me, the vision of Hazur Data Dayal Ji was the truth. For me, this was the ultimate aim of life. But His Holiness Hazur Data Dayal Ji assigned me this duty, so that I may understand the faculties of my mind and realize the truth. Now, I have understood my mind I am obliged to go beyond the realm of my mind to the state beyond "SATYAKAR" or "SATPAD" That state is my original Abode.

I am giving this Sat Sang to Pandit Ji, so that he

may realise the reality of NAM and know the destination, where he is to go. The saints revealed to me the place, from where I have come to this world. I have come from that Supermost Element, which neither takes birth nor dies He is Primordial, Eternal and immortal. But how would you realse it ? You would realise it through a regular inward practice. My observations and experiences of Satsangees have revealed to me that my "SELF" is Primordial, Eternal and Immortal. "SELF" never dies. Death occurs to body, mind and the Light. Death is not for "I". I am the Divine-Self. The word "I" is being used to convey the sense through conversation. Because while talking to or eonversing with you, one has to use the ward "I" and "you", otherwise at that sublime stage neither there is "I" nor there is "you". It is the greatness of NAM. It is only NAM, which makes you realise this truth We do not know ourselves. My research coincides with the research of our saints, so I am convinced of the truth as I am convinced by my relatives and my surroundings that I am son of Sh. Mast Ram Ji, though I do not have any proof this. Similarly, this Sat Sang and inward practice convinces you about your NAM which is primordial, Eternal and Immortal.

He who attains NAM lives a happy and carefree life. He who repeats NAM, his mind gets purified and he attains quietude.

NECTAR OF BHAGAVADGITA

By

His Holiness

Hazur Manav Dayal Ji Maharaj
Dr. I. C. Sharma

DISCOURSE—XIV

[1]

The Lord said :

"I would once again state
That intuitive wisdom ultimate
Which is the excellent science of all
Encompassing existence great or small,
Having known which all sages great
Have attained the perfect state."

[2]

"Those who attain eternal freedom
Having relied on spiritual wisdom
And have merged themselves in Me
Do attain immortality ;
They are not troubled by dissolation,
Nor are they born at new creation."

[3]

"The dynamic nature is material field
In which I sow the spiritual seed ;

The combination then does yield,
The crop of all creatures indeed."

[4]

"Prakriti is the mother indeed,
I am the father, who plants the seed;
This union and combination
Brings creative manifestation.
All the creatures small and great
Are manifestation of a state
Of germination in Prakriti mother
Of the seed of God the father."

[5]

"Invisible Soul which is the ground
Gets unwillingly so bound
In Sattva, Rajas and Tamas element
Which light activity and dullness represent,
As the constituents of Prakriti,
The ultimate material energy."

[6]

"Since Sattva element is pure and bright,
It is connected with wisdom and light;
Oh! you Arjun, sinless and pure;
Sattva does the happiness endure."

[7]

"Since Rajas is caused by active desire,
It always does attachment inspire;
It therefore bind the soul through action;
And also with the desire for fruition."

[8]

"Ignorance is the cause of Tamas element,
Hence it is quite pertinent

To consider it as the cause of delusion,
Laziness, carelessness and confusion ;
Thus it binds the sould indeed ;
Through heaviness by Karma decreed."

[9]

"Oh, Arjuna ! hear once again :
Through Sattva you will pleasure attain ;
Rajas causes dynamic activity
Tamas which is in reality
The cause of intellectual distortion
Brings laziness and retardation."

[10]

"Among Sattva, Rajas and Tamas element,
Each of them can become predominent
By suppressing the other two at a time,
In their struggle internecine."

[11]

"Whenever through our senses and mind
Enters knowledge of any kind
And brings us an enlightenment,
Our body contains Sattva element ;
Such situation thus indicates
That Sattva element predominates."

[12]

"Selfish desire, activity and greed
Disturbance of mind undue speed,
When in you they are all present,
They indicate Rajas element.
When Rajas will predominate
It will these qualities create."

[13]

"Dullness, carelessness and delusion
Which cause great mental confusion
Are born of Tamas element
Which has become predominent."

[14]

"If Sattva predominates, when life ends
Then the soul of man ascends
To pure levels, planes divine
And thus attains life sublime."

[15]

"If Rajas predominates at death
The soul will take an active birth ;
But if Tamas would predominata,
It would such a pattern create
That the soul will reappear
In dull and foolish atmosphere."

[16]

"The result of pure Sattvik action
Is good and virtuous reaction ;
The effect of Rajsik act no doubt
Will a suffering bring about,
And a Tamsik indolent act
Would bring ignorance in fact."

[17]

"The Sattva leads to enlightenment ;
Greed is caused by Rajas element ;
When Tamas has predominence
It causes stark ignorance ;
It causes laziness indeed ;
Delusion it does ever breed."

[18]

"Those who stay in Sattva element
Are always on higher ascent ;
The active or Rajas soul,
Has intermediate goal ;
The Tamas souls with violent nature
Constitute such hopeless stature
That they have a downward trend
And in lower forms descend."

[19]

"A man who has enlightenment
Does know that tripple energy current
Is the cause of evolution
And also of activity and action,
Being one with eternal Supreme Person,
He knows his Self as free from action ;
Such a man attains that state
Which is My Nature Ultimate."

[20]

"Having transcended these three
Elements of the Prakriti,
Which are born of material commotion
And hence are only bodily motion,
This man is free from all those pains
Which every normal man sustains
From old age, death and birth again ;
Immortality he does attain."

[21]

Arjuna said :

"Oh ! my Lord, I have a question
What are the signs of that person ?

Who these three elements transcends ;
What does he do what he intends ?
And also let me know dear-friend !
How can one these three transcend ?
[22-23-24-25]

"A man who is so inclined
That he does never mind
Either involvement or renunciation
Of the three fold manifestation
Of light, activity and delusion
Which are the effects of the diffusion
Of Sattva, Rajas and Tamas elements
Prakriti's triple cons ituents,
Who knows this elemental play
Does not affect the soul any way,
Who is established with rapt attention
In the Supreme Eternal Person,
Who is thus never inclined
To attachment and is resigned,
Who is the same in pleasure and pain
And who does perfect health maintain
For whom stones or sod of earth
And real gold have equal worth ;
For whom good and bad situation
Does present a real equation ;
One who is courageous and considers as seme
The lavish praise or false blame ;
Who maintains the balance of mind
When to fame and scendal confined ;
The man who behaves equally,
Towards the friend and enemy,
The man who has egoism resigned

In activity of every kind,
He is the person my dear friend !
Who does the three elements transcend."

[26]

"One who with pure and constant devotion
And with undisturbed meditation
Has his mind fixed on Me,
He transcends the elements three ;
Thus he deserves that realization,
Which leads to Supreme destination."

[27]

"I am the Source of bliss Supreme,
Which does from all sufferings redeem ;
I am the ground of immortality
Which is the invisible eternity,
I am the Source of righteousness
Which causes spiritual happiness ;
I am the Source and also end
Of Infinite Brahman, my dear friend !"

Monthly Message

OF

H. H. Param Sant

Hazur Manav Dayal Ji Maharaj

Dr. I. C. Sharma

My dearest Satsangees,

Radhaswami and Blessings of the Supreme Compassionate Lord !

I had given a very brief description of my foreign tour in my last monthly message. When we arrived Birmingham from Manchester by bus Mr. Kishore Gupta came to the Bus stand and took us to his residence. The entire day of 6th November was spent at his residence and spiritual discourse was also delivered there in the evening. Mr. Jagdish Gupta, Mr. Dasondha Singh and his family, Mr. Lakshmi Narayan and his wife Shashi, Mr Bakshi Singh and his wife Savitri, Mr. Om Prakash and his wife attended the discourse alongwith others. It was not possible to organize a public discourse in Birmingham this time because I was in a hurry to leave for U.S.A. in order to attend and participate in The Assembly of the World's Religions.

We arrived in New York from London on the 7th November at about 3-30 P.M. Mrs. Thelma Carter and Mr. Kakkar had already arrived on the Airport to receive us We stayed at the residence of Mr. Sudarshan Lal over night. Next morning I proceeded to California by Eastern Airlines and Mrs Bhagya Sharma went to Merryland with Thelma Carter. Mr. Mike Mohoric had already arrived at Sanfrancisco Airport to receive me. We immediately jumped into the car and started for Reno. Since we were late and might had fallen, we stopped over in Sanfrancisco, the capital of California in one of the best hotels for the night. Next morning we pushed off to Reno after our regular bath and breakfast. It may be mentioned here that one of our satsangis of Chandigarh. Mr. Bhatti was residing at Sacremento at that time and still continues to reside there. However, at that time I was not aware of this fact. Only last month he revealed this to me in Hoshiarpur when he came to India on a short visit.

We arrived at Mike's house in Reno. This young man is full of divine love, respect, and ferver. He has no doubt a good running business with a turn-over of millions of Dollars. He has not yet been married. It is hopped that he would soon be settled as a householder formally as well. It is necessary that his partner of life should be spiritually inclined so that both of them enjoy happiness here and bliss hereafter. I am fully aware that Mike is very keen th t his partner of life should be devoted to God and service of humanity which is going to be the case.

During my last summer visit to Mike my white

suit had been left over in his house. When we were flying from Sanfrancisco to Cleveland, I had expressed my desire that my suit should be used by Mike himself, even though he had thought of dispatching that to me in Cleveland. This time when I asked him whether he had used my suit, he replied, "Dr. Sharma, I keep that suit in my meditation room and I touch it to my forehead before sitting for my meditation." I have stated this here in order to let you know that inspite of being financially well-off and inspite of being a born American, he is a unique example of an ideal aspirent full of faith and conviction. I must appreciate his generosity of spending a lot of money on our travel to Reno every time we visit him.

All these events are taking place automatically. People all over the world and especially Americans and Britishers are being drawn towards the religion of spiritual Humanism. Mike had met me only one year ago. During this short period he had visited me to Reno for spiritual discourses and meditation workshops twice. This time my seminar in Reno lasted for five hours continuously. Mike had organized this event which is linked with the celebration of the Centenary of Hazur Param Dayal Ji Maharaj, since we had announced that his Centenary would be celebrated in 1985-86 He had widely publicised the holding of the seminar in the Unity Church of Reno earlier than my arrival and had also sent personal invitations to many people.

As such he was hoping that this time larger number of people would attend the seminar especially because

of the Centenary of Param Dayal Ji Maharaj. When my previous seminar was held in the same Church during the month of June 1985. I had explained the technique of Surat-Shabda Yoga or the Yoga of Light and Sound and many of the audience had liked it. Therefore Mike's expectation of larger gathering was not unfounded. The seminar was to be held on Sunday the 10th November. Most unfortunately Reno city experienced a very heavy snow fall, the heaviest for that city during the past fifty years. Forty eight inches of snow was accumulated on the roads within the 24 hours as a result of which the homes and garages on the roads were blocked. The roads were not motorable unless the snow was removed. Mike said to me, "Sir, it seems that hardly 3 or 4 persons might turn up for seminar at 10 A.M. today." I pacified him and said to him, "We should prefer quality to the quantity and see that the participants in the Seminar have keen desire and purity of mind." At the same time I asked him whether he had Video Camera with him, because I wanted that the video film of the seminar should be taken for record. Mikel told me that even though he did not possess the Video camera, he was prepared to buy a new one for that purpose. I did not allow him to undertake that huge expense.

It began to snow again in the morning of 10th November but it stopped at 9 A M Myself, Mike and Shila went to the Unity Church in my big car which was equipped with snow-tyres. We were inspired to see that the whole auditorium of the Unity Church was full at 9-30 A.M. All of them had managed to

come some or the other. I think it was all due to the Divine Grace of the Supreme Being. All t e people who had come to attend the seminar were keen to know something more about the Yoga of Light and Sound. About half of the audiences had also started practicing this Yoga after my first seminar of June 1985. Mike was overwhelmed to see such a big gathering.

One more interesting event also occured at that time. An old American lady had already brought and fixed the Video Camera in the auditorium. As soon as she greeted me, she said, "Dr. Sharma, I feel that your today's seminar is very special. Therefore I have decided to video tape the whole event today." I am stating this here to let you know that according to the principles of the Manavta Dharma, or the religion of saints, every desire of yours is fulfilled if you meticulously obey the orders of your Spiritual Master. The more I am visiting in India and abroad, the more I am attending religions conferences, and the more I am delivering spiritual discourses with a view to obey the orders of Param Dayal Ji Maharaj, the more I am realizing that some potent inner power is helping me to accomplish this n ble Mission.

That lady gave me the tape recorder video without any cost. I had to leave for Los Angeles in California from Reno on the 11th November. The Airport had almost been closed to air trafic on account of heavy snow. As early stated the public living in Reno reported that such a heavy snow fall had never occured at least for 50 years in the history of that city. The Airport was also under heavy snow. On arriving at the Airport we came to know that almost all the flights

landing in and taking off from the Reno Airport had been cancelled. My flight was the 4th to land. First three flights did not land after hovering over Reno Airport and were permitted to proceed to Los Angeles. By the Grace of God my flight landed in Reno and took me to Los Angeles. I had to stop over here only for a few hours and had to stay with a lady Miss Rooth Vail who is an advocate working with ;he United States Government. She was present at the Airport to receive me. Besides her Dr. Gurbachan Singh the son of Mr. Lal Singh and his wife Kathy Singh had also come at the Airport to receive me. Kathy is a very accomplished lady. She invited all of us for lunch at a decent Resıaurant where we could enjoy vegetarian dishes. After this I went to Santa Maria to stay with Dr. Suresh Roda for one day. Next day I went to San-Jose city via Los Angeles. After staying there over night I arrived at New Ark, New Jercy for participating in the Assembly Of World's Religions Conference. Bhagya had already arrived there.

The Reception Committee of the World's Religions were present at the Airport and immediately took us to a grand hotel in Mc Affee, New Jercy by road. The arrangement for our Board and lodging was superb in that hotel. Six hundred delegates including religions leaders, philosophers and theologians representing about ninety countries participated in this Assembly.

Next day the Inagural function of the Assembly was held after which the Assembly was divided into different sections according to their subjects to be discussed. In my section the scholars from America, Europe, South America and Canada were participating.

One of them was a famous person from Bihar (India) Shri R. R. Divakar who has given up politics and is engaging himself in religion and philosophy. Mr. Divakar was a disciple of Mahatma Gandhi and has held many important positions in the government for a long time. I was very happy to see that he had turned towards spiritualism. My paper entitled "The Technique of God Consciousness in Hindu Tradition" was actually concentrated on Surat-Shabda-Yoga, or the Yoga of Light and Sound advocated by the Religion of Saints. This was accepted and appreciated unanimously by all the participants. In that paper I had attempted to show that the soul and Supreme Being as well as Light and Sound had been accepted even by the Jewish religion and Christianity. The Jewish and Christian Scholars present in my section did accept that Moses and Jesus Christ had experienced Light within themselves. However, they had the objections that there was nothing like Jeevan-Mukti, or perfection, within life-span as a concept in their religions. I asked them what was the consequence of forty days meditation and the vows of silence observed as spiritual discipline by Jews as well as Christians ?

Leaders of both these religions asserted that by observing the spiritual discipline they come to know the Will of God which they accept as the guide to their lives. They accepted that by knowing this they surrendered their will to God. I told them that this very surrender to the Will of God is another name of Jeevan Mukti. Both of them were satisfied on hearing this from me. They asserted that by hearing my paper

they had come to understand that the mutual conflict among religions was an illusion.

Similarly the paper of Mrs. Bhagya Sharma was satisfactorily applanded in her section. After participating in this Assembly for six days we went to Virginia. A centenary seminar in the commemoration of Param Dayal Ji Maharaj had been organized in the A.R.E., the international institution of Research and Enlightenment which had been inviting Param Dayal Ji Maharaj to speak every time. He visited U.S.A. This seminar was also very successful and its tape-recorded copies are with a friend of mine in U.S.A. He is Mr. Bob Mc ewene who also is now our Satsangi.

To be brief after staying in Cleveland for six days. I went to South Carolina where a new centre has been started. We flew from New York on the 11th December by Air India Flight No. 108 and arrived in Delhi on the 13th December at 11-55 P.M. After a few hours myself and Dr. Chandra Negi started from Delhi in the early morning of 14th December and proceeded to Hoshiarpur. We arrived in Manavta Mandir, Hoshiarpur in the evening of 14 December. After delivering the monthly spiritual discourse at the Manavta Mandir on the 15th December 1985, myself, my principal private secretary, Shri S. L. Sethi and Principal Sadhena Saxena proceeded to Delhi by the evening train on the same day.

I again regret to stop shut of giving full details of our activities beyond the 15th December on account of the shortage of time and space.

With these words I send you my greetings and best wishes for your happiness here and bliss here after.

Yours in Faqir
Manav.

वन्दनम्

चरण शरण को वन्दना, नित कोई और न काम ।
गुरु बसो चित आय मेरे, बख्श दो निज नाम ।।
तेरी शरणागत हुआ फिर, किसकी राखूँ आस ।
आस तो तेरी दया की, जग से रहूँ उदास ।।
रूप ध्याऊँ, नाम गाऊँ, शब्द राता मन ।
आठों याम तेरा ही सुमिरन, भाग मेरा धन ।।
सीस पर निज कर कमल धर लिया चरण लगाय ।
पतित पापी तर गया, गुरु शरण तेरी आय ।।
मुक्ति की नहीं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग ।
राधास्वामी की दया से, भाग पूरन जाग ।।

✻ शुभ सूचना ✻

सब भाई बहनों को सूचित किया जाता है कि 13, 14 अप्रेल 1986 को मानवता मन्दिर सतैहरी रोड होशियारपुर में वैशाखी का उत्सव पहले की तरह बड़े उत्साह के साथ मनाया जायेगा। बाहर से आने वाले सज्जनों का भोजन और रहने का प्रबन्ध यथाशक्ति ट्रस्ट करेगा। आपना बिस्तर साथ लायें।

— प्रोग्राम —

इतवार 13 अप्रेल	प्रात: 8 बजे से 11 बजे तक
	सायं 4 बजे से 6 बजे तक
सोमवार 14 अप्रेल	प्रात: 8 बजे से 11 बजे तक
	सायं 4 बजे से 6 बजे तक

नोट :— ट्रस्टियों की मीटिंग 14 अप्रेल 1986 को दिन के 12-30 बजे मानवता मन्दिर होशियारपुर में होगी।

जनरल सेक्रेटरी

Regd. No. 26265/74 MARCH 10th 1986

MANAV MANDIR NWHSP—7

ADDRESS

To

2

72 Sh. Anand Rao Ji
1-3-17 Kalasi Gudda
Mandir
Secunderabad

Phone : 2022

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)